जाति पाँति पूछे नहिँ कोइ। हरि को भजे सो हरि का होइ ॥

जो आँख खोल कर देखा जावे तो विशेष कर पिछले संत और साध जैसे कबीर साहिब रैदास जी इत्यादि ; और भक्त जैसे वाल्मीक (डोमड़ा, श्री कृष्णावतार के समय मेँ) और दूसरे वाल्मीक (बहेलिया, संस्कृत रामायण के ग्रन्थ करता) और सदना (कसाई) ; और जोगेश्वर ज्ञानी जैसे नारद और व्यास आदि ने नीची ही जाति मेँ जन्म लिया जिनकी कीर्त्ति का झंडा आज तक संसार मेँ फहरा रहा है और सदा फहराता रहेगा।

दादू पंथी दादू दयाल के प्रगट होने का भेद इस तरह बतलाते हैँ कि एक टापू मेँ कुछ योगी भगवत भजन करते थे, उन मेँ से एक योगी को आकाश-बाणी द्वारा आज्ञा हुई कि तुम भारतवर्ष मेँ जाकर जीवेँ को चितावो। इस आज्ञा के अनुसार वह योगिराज विचरते हुए जब अहमदाबाद मेँ पहुँचे तो वहाँ लोदीराम नागर ब्राह्मण से भेँट हुई जिस को बेटे की बड़ी अभिलाषा थी; उसने योगी से वर माँगा कि हम को लड़का हो। योगी ने कहा कि बड़े तड़के साबरमती नदी के तट पर जाव वहाँ तुम्हारी इच्छा पूरण होगी। जब लोदी-राम जी दूसरे दिन सवेरे वहाँ पहुँचे तो एक बच्चा नदी में बहता हुआ मिला जिसे लोदीराम निकाल कर घर लाये और पाला। (यह कथा कबीर साहिब की उत्पत्ति कथा से पूरी भाँति से मिलती है जिन्हेँ काशी के लहरतारा नामके तलाव मेँ बहते हुए नीरू जुलाहे ने पाया था और अपना बेटा बनाया) दादू पंथियोँ का निश्चय है कि उन्हीँ योगी जी ने योग बल से अपनी काया बदल कर बच्चे का रूप धारण कर लिया और दादू दयाल बने, इसके प्रमाण मे यह साखी दादू जी की बतलाते हैँ—

सबद बँधाना साह के, ता थैं दादू आया।
दुनियाँ जीवी बापुड़ी, सुख दरसन पाया॥

॥ गुरू ॥

पंडित सुधाकर द्विवेदी जी ने लिखा है कि दादू जी के गुरू कमाल थे जो कबीर साहिब के मुख्य चेलोँ मेँ से थे और जिन को कितने लोग कबीर साहिब का बेटा बतलाते हैँ। दादू साहिब की बाणी में कहीँ से उन के गुरू का नाम नहीँ खुलता परंतु कबीर साहिब की उन्होँने जगह जगह महिमा की है और कहीँ कहीँ साखियाँ भी कबीर साहिब की दी हैँ जिन्हेँ क्षेपक न कहना चाहिये, पर उन के कमाले के शिष्य होने का प्रमाण कही नहीँ मिलता। पं० सुधाकर जी के अनुसार दादू नाम कमाल का ही धरा हुआ है क्योँकि दादू जी छोटे बड़े सब को "दादा" पुकारा करते थे इस लिये कमाल ने उन का नाम दादू रक्खा।

जनगोपाल ने लिखा है कि दादू जी की अवस्था ग्यारह बरस की होने पर परम पुरुष ने एक बूढ़े साधू के भेष मेँ उन को दर्शन दिया जब कि दादू जी

लड़कों में खेल रहे थे और उन को पान का एक बीड़ा खिलाकर मस्तक पर हाथ धरा और परमार्थ का गुप्त भेद देना चाहा जिसे बाल बुद्धि से दादू जी ने न लिया। सात बरस पीछे वही बूढ़े बाबा फिर मिले और दादू जी की बहिर्मुख वृत्ति को दया दृष्टि से अंतरमुख कर के उपदेश दिया। उसी दिन से दादू जी भगवत भजन में तत्पर हो गये और इसी लिये जन गोपाल ने दादू साहिब के गुरू का नाम "वृद्ध बाबा" लिखा है जो सुंदरदास जी के लिखे हुए नाम "वृद्धानन्द" से मिलता है। पं० जगजीवन जी के लेख के अनुसार भी साक्षात परमेश्वर ही दादू साहिब के गुरू थे और इस के प्रमाण में उन्हों ने यह साखी दादू साहिब की दी है—

[दादू] गैब माहिं गुरदेव मिल्या। पाया हम परसाद।
मस्तकि मेरे कर धरया। दृष्या अगम अगाध॥

॥ दयाल का विशेषण ॥

दादू जी का क्षमा और दया का अंग इतना बड़ा था कि दादू "दयाल" के नाम से लोग उन को पुकारने लगे। इस के दृष्टान्त में कहा जाता है कि एक बार एक क़ाज़ी जिसकी गोष्ठी दादू जी के साथ हो रहा थी ऐसा झुँझला उठा कि उन के मुँह पर एक घूँसा मारा परंतु दादू जी क्रोध करने के बदले बड़ी शांति से मुँह आगे करके बोले कि भाई एक और मार ले जिस पर क़ाज़ी बहुत लज्जित हुआ। ऐसे ही किसी समय में वह समाधि में बैठे थे, कुछ ब्राह्मणों ने जो उन से विरोध रखते थे उन को ईंटों से घेर कर बंद कर दिया। जब उन की आँख खुली तो निकलने का रास्ता न पाकर फिर ध्यान में बैठ गये और इस अवस्था में कई दिन तक रहे। अंत को आस पास के सभ्य जनों को यह हाल मिला तो उन्होंने आकर ईंटों को हटाया और बदमाशों को दंड देना चाहा परंतु दयाल जी ने यह कह कर बरजा कि ऐसे लोग जिन की करतूत से हमारा भगवंत के चरणों से अधिक काल तक मेला रहा वह धन्यवाद पाने के योग्य हैं न कि दंड के!

॥ अकबर शाह सहकाली ॥

दादू साहिब का जीवन पूरा पूरा अकबर बादशाह के राज्य समय में था। अकबर के पैदा होने के एक बरस पीछे अर्थात् बिक्रमी सम्वत १६०१ में इन्हों ने जन्म लिया और उस के मरने के दो बरस पहिले अर्थात् १६६० के जेठ बदी अष्टमी शनिवार के अट्ठावन बरस ढाई महीने की अवस्था में चोला छोड़ा। कहते हैं कि सम्वत १६४२ में दादू दयाल की मुलाक़ात फ़तेहपुर सीकरी में अकबर शाह के साथ पहिले पहिल हुई जिस में अकबर ने उन से सवाल किया कि ख़ुदा की ज़ात, अंग, वजूद और रंग क्या है, इस पर दादू जी ने यह जवाब दिया—

[दादू] इसक अलह की जाति है, इसक अलह का अंग।
इसक अलह औजूद है, इसक अलह का रंग॥

(देखो विरह अंग की साखी नं० १५२ पृष्ठ ४४)

॥ रामत (देशाटन) ॥

दादू साहब के पहिले २६ बरस का हाल नहीं मिलता पर सम्वत १६३० में वह साँभर आये और वहाँ अनुमान छः बरस रहे। फिर आँबेर को गये जो जैपुर राज्य की पुरानी राजधानी थी और वहाँ चौदह बरस के लगभग रहे। सम्वत १६५० से १६५६ तक जैपुर, मारवाड़, बीकानेर आदि राज्यों के अनेक स्थानों में बिचरते रहे और फिर सं० १६५६ में नराना में जो जैपुर से २० कोस पर है आकर ठहर गये। वहाँ से तीन चार कोस भराने की पहाड़ी है— यहाँ भी दादू दयाल कुछ काल तक रहे और यहाँ सं० १६६० मे चोला छोड़ा इस लिये यह स्थान बहुत पुनीत समझा जाता है, बहुधा साधू वहाँ यात्रा को जाते हैं और कितने साधुओं के फूल भी वहाँ गाड़े जाते हैं।

॥ अखाड़े ॥

इस सम्प्रदाय के बावन प्रसिद्ध अखाड़े हैं और हर एक का महंत अलग है। यह अखाड़े विशेष कर जैपुर राज्य में हैं और कुछ अलवर, मारवाड़, मेवाड़, बीकानेर आदि राज्यों में और पंजाब व गुजरात आदि देशों में हैं। काशी में भी दादू पंथियों का एक अखाड़ा है। सब महंतों के मुखिया नराना में रहते हैं जहाँ दादू दयाल ने अपने पिछले दिनों में निवास किया था।

॥ भेषों के चिन्ह और रीति और रहनी ॥

इस पंथ में दो प्रकार के साधू पाये जाते हैं एक भेषधारी बिरक्त जो गेरुआ वस्त्र पहिनते हैं और पठन पाठन कथा कीर्तन जप भजन में अपना पूरा समय लगाते हैं; दूसरे नागा जो सपेद सादे कपड़े पहिनते हैं और लेन देन खेती फ़ौज की नौकरी वैद्यक आदि व्यौहार रुपया कमाने के लिये करते हैं। नागों की फ़ौज जैपुर राज्य की मशहूर है जिस में दसहज़ार नागा से कम न होंगे।

दोनों प्रकार के साधू ब्याह नहीं करते, गृहस्थों के लड़कों को चेला मूड़ कर अपना बंस और पंथ चलाते हैं।

दादू-पंथी साधू कबीर पंथियों की तरह न तो माथे पर तिलक लगाते और न गले में कंठी पहिनते पर प्रायः हाथ में सुमिरनी रखते हैं। यह लोग सिर पर टोपा या मुरायठ पहिनते हैं और आते जाते समय एक दूसरे से "सत राम" कहते हैं। मुरदे को यह लोग चिता लगाकर जला देते हैं पर यह चाल नई निकली है। प्राचीन रीति के अनुसार मुरदे को अरथी या बिमान पर रख कर जंगल में छोड़ आते थे जिस में पशु पंछी उस का अहार करें। दादू दयाल ने इसी चाल को अपने उपदेश में उत्तम कहा है—

हरि भज साफल जीवना, पर उपगार समाइ ।
दादू मरणा तहँ भला, जहँ पशु पंखी खाइ ॥
साध सूर सोहैं मैदाना । उनका नाहीं गोर मसाना ॥

॥ मुख्य तीर्थ ॥

नराना में जहाँ दादू-पंथियों की मुख्य गद्दी है एक दर्शनीय मंदिर दादू रा के नाम का है। यहाँ दादू दयाल के रहने और बैठने के निशान अब तक जूद हैं और उनके पहिरने के कपड़े हैं और पोथियाँ जिन की पूजा होती है।

॥ मेला ॥

नराना में फागुन सुदी से (जिस दिन दादू दयाल वहाँ पहिली बार ये थे) द्वादशी तक नौ दिन भारी मेला हर साल होता है।

॥ इष्ट और मत शिक्षा ॥

दादू साहिब कबीर साहिब की तरह निर्गुण के उपासक थे पर इन का इष्ट ह्मांड का धनी निरंजन निराकार परमेश्वर था उसी को सब में रमने वाला म कह कर सुमिरन भजन कराते थे। उन के मति की शिक्षा नीचे लिखे हुए षयों पर थी—

(१) परमेश्वर की महिमा और उसका सच्चिदानन्द स्वरूप।
(२) उसकी निर्गुण आराधना और अनन्य भक्ति।
) उसकी परम उपासना और उसका अजपा जाप।
मन को परम रूप में स्थिर करने के साधन।
रम रूप का ध्यान और धारणा और समाधि।
अनहद बाजे का श्रवण और उसमें मग्न होना।
अमृत बिंदु का पान और परमानंद की प्रीति।
परमेश्वर से अरस परस मिलाप—ब्रह्म का साक्षातकार।

॥ समाज संशोधन ॥

याल केवल परमार्थी शिक्षक न थे बरन संसारी चाल व्यवहार और में भी उन्होंने बहुत सुधार किया।

॥ चमत्कार ॥

लिखा है कि एक साल दादू दयाल आँधी नामक गाँव में चौमासे की ऋतु थे जहाँ वर्षा न होने के कारण जीवों को अति विकल देखकर उन की माँग र भगवंत से प्रार्थना करके दादू जी ने जल बरसाया और अकाल को दूर या, इसके प्रमाण में यह साखी बतलाते हैं [देखो पृष्ठ ४५, बिरह अंग की १७ वीं साखी]

आज्ञा अपरंपार की, बसि अंबर भरतार।
हरे पटम्बर पहिरि करि, धरती करती करै सिंगार ॥

॥ बहु भाषा बोध ॥

दादू दयाल कुछ विशेष पढ़े लिखे न थे यद्यपि उन की साखियाँ और प[illegible] में अनेक भाषाओं के शब्द मिलते हैं और कितनी ही साखी और प[illegible] फ़ारसी में हैं। गुजराती तो उन की मातृ भाषा थी ही और मारवाड़ [illegible] बहुत काल तक रहे थे सो वहाँ की भाषाओं का जानना अचरज नहीं ह परंतु उन की बाणी से पंजाबी सिंधी, मरहठी और बृज भाषा की भी अच्छी जानकारी पाई जाती है। जहाँ जहाँ ऐसे शब्द आये हैं उन के अर्थ भर मक़दूर तहक़ीक़ात करके नोट में दे दिये गये हैं। दादू साहब ने अपनी बाणी कभी अपने हाथ से नहीं लिखी, उन के पास रहने वाले शिष्य जो कुछ उन के मुख से निकलता था लिख लिया करते थे।

॥ संपादक की सूचना ॥

इस पुस्तक को हम ने दो प्राचीन लिपियों से छापा है—एक तो हम को बाबू सत्यनारायण प्रसाद जी स्वर्ग बासी काशी राज के तहसीलदार ने अनुमान दस बरस हुए दी थी और दूसरी मास्टर बनवारीलाल जी प्रयाग निवासी से मिली इस लिये हम इन दोनों महाशयों को अनेक धन्यबाद देते हैं। इन के सिवाय तीन पुस्तकें काशी, लाहौर और अजमेर के छापे की हम को मिलीं जिन में से पहिली दो तो बहुत ही अशुद्ध थीं परंतु तीसरी पंडित चंद्रिका प्रसाद की छापी हुई पुस्तक से (यद्यपि कितने एक स्थान में उस के पाठ और टीका से हम ने सम्मति नहीं की है) अधिक सहायता मिली जिस के लिये उन को भी धन्यबाद देते हैं। जीवन-चरित्र के लिखने में हम को उन के एक लेख से जो 'प्रथम हिन्दी साहित्य सम्मेलन" पत्रिका में छपा था बहुत मदद मिली।

हम दादू दयाल की बाणी को दो भाग में छाप रहे हैं क्योंकि पहिले तो साखियों का पदों से अलग रखना जब कि हर एक की संख्या बड़ी है उचित जान पड़ता है, दूसरे इस रीति से पढ़ने वालों को भी हर तरह का सुबीता होगा।

थोड़ी सी साखियाँ ऐसी हैं जो दूसरे अंग में दुहराई हुई हैं परन्तु जो [illegible] यह ढंग सर्व हस्त-लिखित और छपी पुस्तकों में पाया गया इस लिये हम ने भी उसी अनुसार इस पुस्तक में रक्खा है अर्थात जहाँ किसी एक अंग में आई हुई साखी फिर दूसरे अंग में दी है वहाँ पहले में अंग का और उस साखी का नम्बर (ब्राकट) में दे दिया है—जैसे "परचा" के अंग नं० ४ की साखियाँ १४५ व १४६ वही हैं जो बिरह अंग नं० ३ के नं० ७० और ६६ में आचुकी थीं इस लिये जहाँ वह कड़ियाँ दोहराई गई हैं अर्थात चौथे अंग की १४५ वीं साखी के सामने (३-७०) और १४६ वीं के आगे (३-६६) छाप दिया गया है—देखो पृष्ठ ६१ ॥

दादू दयाल की बानी

भाग १—साखी

१—गुरुदेव को अंग

॥ बंदना ॥

दादू नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्ब साधवा, प्रणामं पारंगतः[१] ॥ १ ॥
परब्रह्म परापरं[२], सो मम देव निरंजनं ।
निराकारं निर्मलं, तस्य दादू बन्दनं ॥ २ ॥

॥ गुरु महिमा ॥

[दादू] गैब माहिँ गुरदेव मिल्या, पाया हम परसाद
मस्तक मेरे कर धर्‌या, देख्या अगम अगाध ॥ ३ ॥
दादू सतगुर सहज में, कीया बहु उपगार[३] ।
निरधन धनवँत करि लिया, गुर मिलिया दातार ॥ ४
[दादू] सतगुर सूँ सहजैं मिल्या, लीया कंठ लगाइ ।
दाया भई दयाल की, तब दीपक दिया जगाइ ॥ ५
दादू देव दयाल को, गुरू दिखाई बाट ।
ताला कूँची लाइ करि, खोले सबै कपाट ॥ ६ ॥
[दादू] सतगुर अंजन बाहि करि, नैन पटल सब खोले
बहरे कानौं सुणने लागे, गूँगे मुख सूँ बोले ॥ ७ ॥

---

१ माया देश के पार पहुँचे हुए । २ कारण भाव से परे । ३ उपकार ।

सतगुर दाता जीव का, स्रवन सीस कर नैन ।
तन मन सौंज सँवारि सब, मुख रसना अरु बैन ॥
राम नाम उपदेस करि, अगम गवन यहु सैन ।
दादू सतगुर सब दिया, आप मिलाये ऐन ॥ ९ ॥
सतगुर कीया फेरि करि, मन का औरै रूप ।
दादू पंचौं पलटि करि, कैसे भये अनूप ॥ १० ॥
साचा सतगुर जे मिलै, सब साज सँवारै ।
दादू नाव चढ़ाइ करि, ले पार उतारै ॥ ११ ॥
[दादू] सतगुर पसु माणस[1] करै, माणस थैं[2] सिध सो
दादू सिध थैं देवता, देव निरंजन होइ ॥ १२ ॥
दादू काढ़े काल मुख, अंधे लोचन देइ ।
दादू ऐसा गुर मिल्या, जीव ब्रह्म करि लेइ ॥ १३ ॥
दादू काढे काल मुख, स्रवनहुँ सब्द सुनाइ ।
दादू ऐसा गुर मिल्या, मिरतक लिये जिलाइ ॥ १४ ॥
दादू काढ़े काल मुख, गूँगे लिये बोलाइ ।
दादू ऐसा गुर मिल्या, सुख मैं रहे समाइ ॥ १५ ॥
दादू काढ़े काल मुख, मिहर दया करि आइ ।
दादू ऐसा गुर मिल्या, महिमा कही न जाइ ॥ १६ ॥
सतगुर काढ़े केस गहि, डूबत इहि संसार ।
दादू नाव चढ़ाइ करि, कीये पैली पार[3] ॥ १७ ॥
भवसागर मैं डूबताँ, सतगुर काढ़े आइ ।
दादू खेवट गुर मिल्या, लीये नाव चढ़ाइ ॥ १८ ॥
दादू उस गुरदेव की, मै बलिहारी जाउँ ।
जहँ आसण अमर अलेख था, ले राखे उस ठाउँ ॥ १९

---

१ मनुष्य । २ से । ३ पल्ली पार ।

॥ आत्म बोध ॥

आतम माहैं ऊपजै, दादू पंगुल ज्ञान ।
किरतिम[1] जाइ उलंघि करि, जहाँ निरंजन थान ।
आतम बोध बंझ[2] का बेटा, गुरमुख उपजै आइ
दादू पंगुल पंच बिन, जहाँ राम तहँ जाइ ॥ २१ ॥

॥ अनहद शब्द ॥

साचा सहजैं ले मिलै, सबद गुरू का ज्ञान ।
दादू हम कूँ ले चल्या, जहँ प्रीतम (का) अस्थान ॥
दादू सबद बिचारि करि, लागि रहै मन लाइ ।
ज्ञान गहै गुरदेव का, दादू सहजि समाइ ॥ २३ ॥
[दादू कहै] सतगुर सबद सुणाइ करि, भावै जीव ज
भावै अंतर आप कहि, अपने अंग लगाइ ॥ २४ ॥
[दादू] बाहर सारा देखिये, भीतर कोया चूर ।
सतगुर सबदौं मारिया, जाण न पावै दूर ॥ २५ ॥
[दादू] सतगुर मारे सबद सौं, निरखि निरखि निज
राम अकेला रहि गया, चीत[3] न आवै और ॥ २
दादू हम कूँ सुख भया, साध सबद गुर ज्ञाण ।
सुधि बुधि सोधो समझि करि, पाया पद निरबाण
[दादू] सबद बान गुर साधि के, दूरि दिसंतरि ज
जेहि लागे सो ऊबरे, सूते लिये जगाइ ॥ २८ ॥
सतगुर सबद मुख सौं कह्या, क्या नेड़े क्या दूर ।
दादू सिष स्रवनहुँ सुण्या, सुमिरण लागा सूर ॥ २

1 कृत्रिम । 2 बाँझ । 3 चित्त ।

॥ करनी ॥

सबद दूध घृत राम रस, मथि करि काढ़ै कोइ ।
दादू गुर गोबिंद बिन, घट घट समझि न होइ ॥ ३० ॥
सबद दूध घृत राम रस, कोइ साध बिलोवणहार ।
दादू अमृत काढ़ि ले, गुरमुखि गहै बिचार ॥ ३१ ॥
घीव दूध मैं रमि रह्या, व्यापक सबही ठौर ।
दादू बकता बहुत हैं, मथि काढ़ैं ते और ॥ ३२ ॥
कामधेनु घट घीव है, दिन दिन दुरबल होइ ।
गोरू[1] ज्ञान न ऊपजै, मथि नहिं खाया सोइ ॥ ३३ ॥
साचा समरथ गुर मिल्या, तिन तत दिया बताइ ।
दादू मोट[2] महा बली, घट घृत मथि करि खाइ ॥ ३४ ॥
मथि करि दीपक कीजिये, सब घट भया प्रकास ।
दादू दीया[3] हाथ करि, गया निरंजन पास ॥ ३५ ॥
दीयै[3] दीया कीजिये, गुरमुख मारग जाइ ।
दादू अपणे पीव का, दरसण देखै आइ ॥ ३६ ॥
दादू दीया[3] है भला, दिया करौ सब कोइ ।
घर मैं धर्या न पाइये, जे कर दिया न होइ ॥ ३७ ॥
[दादू] दीये का गुण ते लहैं[4], दीया मोटी[5] बात ।
दीया जग मैं चाँदना, दीया चालै साथ ॥ ३८ ॥
निर्मल गुर का ज्ञान गहि, निर्मल भगति बिचार ।
निर्मल पाया प्रेम रस, छूटे सकल बिकार ॥ ३९ ॥
निर्मल तन मन आतमा, निर्मल मनसा सार ।
निर्मल प्राणी पंच करि, दादू लंघै पार ॥ ४० ॥

---

१ गाय । २ बड़ा । ३ "दीया" या दीवा चिराग़ को कहते हैं जिस का अभिप्राय "ज्ञान" है, और साखी ३७ व ३८ में "दान" का भी अलंकार है । ४ लखैं । ५ बड़ी ।

परा परी पासैं रहै, कोई न जाणे ताहि ।
सतगुर दिया दिखाइ करि, दादू रह्या ल्यौ[1] लाइ ॥४१॥

॥ जिज्ञासा ॥

प्रश्न—जिन हम सिरजे[2] सो कहाँ, सतगुर देहु दिखाइ ।
उत्तर—दादू दिल अरवाह[3] का, तहँ मालिक ल्यौ[1] लाइ ॥४२॥

मुझ ही मैं मेरा धणी, पड़दा खोलि दिखाइ ।
आतम सौं परआतमा,[4] परगट आणि मिलाइ ॥४३॥
भरि भरि प्याला प्रेम रस, अपणे हाथ पिलाइ ।
सतगुर के सदिकै[5] किया, दादू बलि बलि जाइ ॥४४॥
सरवर भरिया दह दिसा, पंखी[6] प्यासा जाइ ।
दादू गुर परसाद बिन, क्यौं जल पीवै आइ ॥४५॥
मानसरोवर माँहिं जल, प्यासा पीवै आइ ।
दादू दोस न दीजिये, घर घर कहण न जाइ ॥४६॥

॥ गुरु लक्षण ॥

दादू गुर गरुवा[7] मिलै, ता थैं सब गमि होइ ।
लोहा पारस परसताँ, सहज समाना सोइ ॥ ४७ ॥
दीन गरीबी गहि रह्या, गरुवा गुर गंभीर ।
सूषिम[8] सीतल सुरति मति, सहज दया गुर धीर ॥४८॥
सोधी दाता पलक मैं, तिरै[9] तिरावन जोग ।
दादू ऐसा परम गुर, पाया केहिं संजोग ॥ ४९ ॥
[दादू] सतगुर ऐसा कीजिये, राम रस माता ।
पार उतारै पलक मैं, दरसन का दाता ॥ ५० ॥

---

१ लौ । २ पैदा किया । ३ "अरवाह" बहुबचन अरबी शब्द "रूह" का है जिस का अर्थ जीवात्मा है—आलमे-अरवाह ब्रह्मांड को कहते हैं । ४ परमात्मा । ५ निछावर । ६ पक्षी । ७ भारी, पूरा । ८ सूक्ष्म । ९ तारै ।

देवै किरका[1] दरद का, टूटा जोड़ै तार ।
दादू साधै सुरति को, सो गुर पीर हमार ॥ ५१ ॥
दादू घाइल ह्वै रहे, सतगुर के मारे ।
दादू अंग लगाइ करि, भवसागर तारे ॥ ५२ ॥
दादू साचा गुर मिल्या, साचा दिया दिखाइ ।
साचे कूँ साचा मिल्या, साचा रह्या समाइ ॥ ५३ ॥
साचा सतगुर सोधि ले, साचे लीजै साध ।
साचा साहिब सोधि करि, दादू भगति अगाध ॥ ५४ ॥
सनमुख सतगुर साध सूँ, साईं सूँ राता ।
दादू प्याला प्रेम का, महा रसिस माता ॥ ५५ ॥
साईं सूँ साचा रहै, सतगुर सूँ सूरा ।
साधू सूँ सनमुख रहै, सो दादू पूरा ॥ ५६ ॥
सतगुर मिलै तो पाइये, भगति मुकति भंडार ।
दादू सहजैं देखिये, साहिब का दीदार ॥ ५७ ॥
[दादू] साईं सतगुर सेविये, भगति मुकति फल होइ ।
अमर अभय पद पाइये, काल न लागै कोइ ॥ ५८ ॥

॥ गुरू बिन ज्ञान नहीं ॥

इक लख चंदा आणि घर, सूरज कोटि मिलाइ ।
दादू गुर गोविंद बिन, तौ भी तिमर न जाइ ॥ ५९ ॥
अनेक चंद उदय करै, असंख सूर परकास ।
एक निरंजन नाँव बिन, दादू नहीं उजास ॥ ६० ॥
[दादू] कदि यहु आपा जाइगा, कदि यहु बिसरै और ।
कदि यहु सूषिम होइगा, कदि यहु पावै ठौर ॥ ६१ ॥

---
[1] किनका ।

[दादू] बिषम दुहेला जीव कूँ, सतगुर थैं आसान।
जब दरवै तब पाइये, नेड़ा ही अस्थान ॥ ६२ ॥

॥ गुरु ज्ञान ॥

[दादू] नैन न देखैं नैन कूँ, अंतर भी कुछ नाहिँ।
सतगुर दरपन करि दिया, अरस परस मिलि माहिँ ॥

घट घट रामहिँ रतन है, दादू लखै न कोइ।
सतगुर सबदौँ पाइये, सहजैं ही गम होइ ॥ ६४ ॥

जबहीँ कर दीपक दिया, तब सब सूझन लाग।
यूँ दादू गुर ज्ञान थैँ, राम कहत जन जाग ॥ ६५ ॥

॥ अजपा जाप ॥

[दादू] मन माला तहँ फेरिये, जहँ दिवस न परसै रा
तहाँ गुरू बाना दिया, सहजैं जपिये तात ॥ ६६ ॥

[दादू] मन माला तहँ फेरिये, जहँ प्रीतम बैठे पास।
अगम गुरू थैं गम भया, पाया नूर निवास ॥ ६१ ॥

[दादू] मन माला तहँ फेरिये, जहँ आपै एक अनंत
सहजैं सो सतगुर मिल्या, जुग जुग फाग बसंत ॥ ६

[दादू] सतगुर माला मन दिया, पवन सुरति सूँ पो
बिन हाथौँ निस दिन जपै, परम जाप यूँ होइ ॥ ६९

[दादू] मन फकीर माहैं हुआ, भीतर लीया भेख।
सबद गहै गुरदेव का, माँगै भीख अलेख ॥ ७० ॥

[दादू] मन फकीर सतगुर किया, कहि समझाया ज्ञा
निहचल आसणि बैसि करि, अकल[1] पुरुस का ध्यान ॥

[दादू] मन फकीर जग थैं रह्या, सतगुर लीया लाइ।
अहि निसि लागा एक सूँ, सहज सुन्न रस खाइ ॥७२॥

[दादू] मन फकीर ऐसे भया, सतगुर के परसाद।
जहँ का था लागा तहाँ, छूटे बाद बिबाद ॥ ७३ ॥

ना घरि रहा न बन गया, ना कुछ किया कलेस।
दादू मन हीं मन मिल्या, सतगुर के उपदेस ॥ ७४ ॥

[दादू] यहु मसीत[1] यहु देहुरा[2], सतगुर दिया दिखाइ
भीतरि सेवा बंदगी, बाहरि काहे जाइ ॥ ७५ ॥

[दादू] मंझे चेला मंझि गुर, मंझे ही उपदेस।
बाहरि ढूँढै बावरे, जटा बँधाये केस ॥ ७६ ॥

॥ भरमो मन का दमन ॥

मन का मस्तक मूँडिये, काम क्रोध के केस।
दादू बिषै बिकार सब, सतगुर के उपदेस ॥ ७७ ॥

दादू पड़दा भरम का, रहा सकल घटि छाइ।
गुरु गोबिंद किरपा करैं, तौ सहजैं हीं मिटि जाइ ॥७८

॥ सूक्ष्म मार्ग ॥

[दादू] जेहि मति साधू ऊधरै, सो मति लीया सोध
मन ले मारग मूल गहि, यहु सतगुर का परमोध ॥७९

[दादू] सोई मारग मन गह्या, जेहिं मारग मिलिये जाइ
बेद कुरानूँ ना कह्या, सो गुर दिया दिखाइ ॥ ८० ॥

॥ जीव की बेबसी—मन के रोकने का जतन गुरु-सरन ॥

मन भुवंग यहु बिष भस्या, निरबिष क्यौंहि न होइ।
दादू मिल्या गुर गारुड़ी[3], निरबिष कीया सोइ ॥ ८१

एता कीजै आप थैं, तन मन उनमुनि लाइ ।
पंच समाधी राखिये, दूजा सहज सुभाइ ॥ ८२ ॥

[दादू] जीव जँजालौं पड़ि गया, उलभया नौ मण
कोइ इक सुलझै सावधान, गुर बायक[1] अवधूत[2] ॥

चंचल चहुँ दिसि जात है, गुर बायक[1] सूँ बंधि ।
दादू संगति साध की, पारब्रह्म सूँ संधि[3] ॥ ८४ ॥

गुर अंकुस माणै नहीं, उद्मत[4] माता[5] अंध ।
दादू मन चेतै नहीं, काल न देखै फंध ॥ ८५ ॥

[दादू] मार्‌याँ बिन मानै नहीं, यह मन हरि की आ
ज्ञान खड्ग गुरदेव का, ता सँग सदा सुजान ॥ ८

जहाँ थैं मन उठि चलै, फेरि तहाँ ही राखि ।
तहँ दादू लय लीन करि, साध कहैं गुर साखि ॥

[दादू] मनहीं सूँ मल ऊपजै, मन हीं सूँ मल धोइ
सीख चलै गुर साध की, तौ तूँ निर्मल होइ ॥ ८८

[दादू] कच्छिब[6] अपने करि लिये, मन इन्द्री निज ठ
नाँइ[7] निरंजन लागि रहु, प्राणी परिहरि[8] और ॥ ८

मन के मते सब कोइ खेलै, गुरमुख बिरला कोइ ।
दादू मन की मानै नहीं, सतगुर का सिष सोइ ॥ ९

सब जीवन कूँ मन ठगै, मन कूँ बिरला कोइ ।
दादू गुर के ज्ञान सूँ, साईं सनमुख होइ ॥ ९१ ॥

[दादू] एक सूँ लयलीन हूणाँ, सबै सयानप येह ।
सतगुर साधू कहत हैं, परम तत्त जपि लेह ॥ ९२ ॥

---

१ बायक = वाक्य । २ त्यागी, नागा । ३ मेला । ४ क्रोधी । ५ मतव
६ कछुवा । ७ नाम । ८ त्याग कर ।

सतगुर को समझै नहीं, अपणै उपजै नाहिं ।
तौ दादू क्या कीजिये, बुरी बिथा मन माहिं ॥ ११४ ॥

॥ अनाड़ी और पाखंडी गुरू ॥

गुर अपंग पग पंख बिन, सिष साखा का भार ।
दादू खेवट नाव बिन, क्यूँ उतरैंगे पार ॥ ११५ ॥
दादू संसा जीव का, सिष साखा का साल ।
दोनौं कूँ भारी पड़ी, हूँगा कौण हवाल ॥ ११६ ॥
अंधे अंधा मिलि चले, दादू बंधि कतार ।
कूप पड़े हम देखताँ, अंधे अंधा लार ॥ ११७ ॥
सोधी नहीं सरीर की, औरौं कूँ उपदेस ।
दादू अचरज देखिया, ये जाहिंगे किस देस ॥ ११८ ॥
[दादू] सोधी नहीं सरीर की, कहैं अगम की बात ।
जान कहावैं बापुड़े, आवध लीये हाथ[1] ॥ ११९ ॥
[दादू] माया माहैं काढ़ि करि, फिरि माया मैं दीन्ह
दोऊ जन समझैं नहीं, एकौ काज न कीन्ह ॥ १२० ॥
[दादू] कहै सो गुर किस काम का, गहि भरमावै आन
तत्त बतावै निर्मला, सो गुर साध सुजान ॥ १२१ ॥
तू मेरा हूँ तेरा, गुर सिष कीया मंत ।
दोनौं भूले जात हैं, दादू बिसर्या कंत ॥ १२२ ॥
दुहि दुहि पीवै ग्वाल गुर, सिष है छेली[2] गाइ ।
यहु अवसर यौं हीं गया, दादू कहि समझाइ ॥ १२३
सिष गोरू गुर ग्वाल है, रच्छा करि करि लेइ ।
दादू राखै जतन करि, आणि धणी कूँ देइ ॥ १२४ ॥

१ बेचारे अपने को सुजान कहते हैं पर मौत की खबर नहीं

झूठे अंधे गुर घने, भरम दिढ़ावैं आइ।
दादू साचा गुर मिलै, जीव ब्रह्म ह्वै जाइ ॥ १२५ ॥

झूठे अंधे गुर घणे, बंधे विषय विकार।
दादू साचा गुर मिलै, सनमुख सिरजनहार ॥ १२६ ॥

झूठे अंधे गुर घणे, भरम दिढ़ावैं काम।
बंधे माया मोह सौं, दादू मुख सौं राम ॥ १२७ ॥

झूठे अंधे गुर घणे, भटकैं घर घर बारि।
कारज को सीझै नहीं, दादू माथै मारि ॥ १२८ ॥

[दादू] भगत कहावैं आप कूँ, भगति न जाणैं भेद।
सुपने हीं समझैं नहीं, कहाँ बसै गुरदेव ॥ १२९ ॥

॥ कर्म भर्म का निषेध ॥

भरम करम जग बंधिया, पंडित दिया भुलाइ।
दादू सतगुर ना मिलै, मारग देइ दिखाइ ॥ १३० ॥

[दादू] पंथ बतावैं पाप का, भरम करम बेसास[1]।
निकट निरंजन जे रहै, क्यों न बतावै तास ॥ १३१ ॥

दादू आपा उरझैं उरझिया, दीसै सब संसार।
आपा सुरझैं सुरझिया, यहु गुर ज्ञान विचार ॥ १३२ ॥

॥ गुरमुख कसौटी ॥

साधू का अँग निर्मला, ता मैं मल न समाइ।
परम गुरू परगट कहै, ता थैं दादू ताइ ॥ १३३ ॥

॥ सुमिरन ॥

राम नाम गुर सबद सौं, रे मन पेल भरम।
[illegible] सौं मन मिल्या, दादू काटि करम ॥ १३४ ॥

---

१ बिश्वास।

॥ सूक्ष्म मार्ग ॥

[दादू] बिन पाइन का पंथ है, क्यौं करि पहुँचै प्राण ।
बिकट घाट औघट खरे, माहिं सिखर असमान ॥ १३५ ॥
मन ताजी[1] चेतन चढ़ै, ल्यौ[2] की करै लगाम ।
सबद गुरू का ताजणाँ[3], कोइ पहुँचै साध सुजान ॥ १३६ ॥

॥ स्वार्थी परमार्थी ॥

साधौं सुमिरण सो कह्या, [जेहि] सुमिरण आपा भूल[4] ।
दादू गहि गम्भीर गुर, चेतन आनँद मूल ॥ १३७ ॥
[दादू] आप सुवारथ सब सगे, प्राण सनेही नाहिँ ।
प्राण सनेही राम है, कै साधू कलि माहिँ ॥ १३८ ॥
सुख का साथी जगत सब, दुख का नाहीँ कोइ ।
दुख का साथी साइयाँ, दादू सतगुर होइ ॥ १३९ ॥
सगे हमारे साध हैँ, सिर पर सिरजनहार ।
दादू सतगुर सो सगा, दूजा धुंध बिकार ॥ १४० ॥
दादू के दूजा नहीँ, एकै आतम राम ।
सतगुर सिर पर साध सब, प्रेम भगति बिसराम ॥ १४१ ॥

॥ गुरु भृंगी ॥

दादू सुधि बुधि आतमा, सतगुर परसै आइ ।
दादू भृंगी कीट ज्यौं, देखत ही ह्वै जाइ ॥ १४२ ॥
दादू भृंगी कीट ज्यौं, सतगुर सेती होइ ।
आप सरीखे करि लिये, दूजा नाहीँ कोइ ॥ १४३ ॥
[दादू] कच्छिब राखै दृष्टि मैं, कुंजौं के मन माहिँ[5] ।
सतगुर राखै आपणाँ, दूजा कोई नाहिँ ॥ १४४ ॥

१घोड़ा। २लौ। ३कोड़ा। ४सुमिरन उस का नाम है जिस से आपा का नाश हो। ५ कछुवा अपने बच्चों को दृष्टि से और कुंज चिड़िया सुरति से पालती है।

बच्चौं के माता पिता, दूजा नाहीं कोइ ।
दादू निपजै भाव सौं, सतगुर के घट होइ ॥ १४५ ॥

॥ भरोसा ॥

एकै सबद अनंत सिष, जब सतगुर बोलै ।
दादू जड़े कपाट सब, दे कूंची खोलै ॥ १४६ ॥
बिनही कीया होइ सब, सनमुख सिरजनहार ।
दादू करि करि को मरै, सिष साखा सिर भार ॥ १४
सूरज सनमुख आरसी, पावक किया प्रकास ।
दादू साईं साध बिच, सहजैं निपजै दास ॥ १४८ ॥

॥ मन इन्द्री निग्रह ॥

[दादू] पंचौं ये परमोधि ले, इन हीं कूँ उपदेस ।
यहु मन अपणा हाथ करि, तौ चेला सब देस ॥ १४
अमर भये गुर ज्ञान सौं, केते यहि कलि माहिं ।
दादू गुर के ज्ञान बिन, केते मरि मरि जाहिं ॥ १५
औषधि खाइ न पछि[1] रहै, बिषम ब्याधि[2] क्यौं जा
दादू रोगी बावरा, दोस बैद कूँ लाइ ॥ १५१ ॥
बैद बिथा कहै देखि करि, रोगी रहै रिसाइ ।
मन माहीं लीये रहै, दादू ब्याधि न जाइ ॥ १५२ ॥
[दादू] बैद बिचारा क्या करै, रोगी रहै न साच ।
खाटा मीठा चरपरा, माँगै मेरा बाच[3] ॥ १५३ ॥

॥ गुरु उपदेश ॥

दुर्लभ दरसन साध का, दुर्लभ गुर उपदेस ।
दुर्लभ करिबा कठिन है, दुर्लभ परस अलेख ॥ १५४

१ पथ से, परहेज़ के साथ । २ भारी रोग । ३ बच्चा ।

[दादू] अविचल मंत्र अमर मंत्र अछय मंत्र,
अभय मंत्र राम मंत्र निज सार।
सजीवन मंत्र सबीरज मंत्र सुंदर मंत्र,
सिरोमणि मंत्र निरमल मंत्र निराकार॥
अलख मंत्र अकल मंत्र अगाध मंत्र अपार मंत्र,
अनंत मंत्र राया।
नूर मंत्र तेज मंत्र जोति मंत्र प्रकास मंत्र,
परम मंत्र पाया।
उपदेस दिष्या[1] दादू गुर राया॥१५५॥
दादू सब ही गुर किये, पसु पंखी बनराय।
तीन लोक गुण पंच सूँ, सब ही माहिं खुदाइ॥
जे पहली सतगुर कह्या, सो नैनहुँ देख्या आइ।
अरस परस मिलि एक रस, दादू रहे समाइ॥१

१ गुर दीक्षा। साखी १५५ में जो मंत्रों के नाम लिखे हैं वह भगवंत के गुण-वाचक हैं।

२—सुमिरन को अंग

॥ वंदना ॥

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुरदेवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥

एकै अच्छर पीव का, सोई सतकरि जाणि ।
राम नाम सतगुर कह्या, दादू सो परवाणि[1] ॥ २ ॥

पहली स्रवन दुती रसन, तृतिये हिरदे गाइ ।
चतुर्दसी चिंतन[2] भया, तब रोम रोम ल्यौ लाइ ॥

॥ नाम महिमा ॥

दादू नीका नाँव है, तीन लोक तत सार ।
राति दिवस रटिबो करी, रे मन इहै बिचार ॥ ४

दादू नीका नाँव है, हरि हिरदै न बिसारि ।
मूरति मन माहैं बसै, साँसै साँस सँभारि ॥ ५ ॥

साँसै साँस सँभालताँ, इक दिन मिलिहै आइ ।
सुमिरण पैंड़ा सहज का, सतगुर दिया बताइ ॥ ६ ॥

दादू नीका नाँव है, सो तूँ हिरदै राखि ।
पाखंड परपँच दूर करि, सुनि साधू जन की साखि ॥७॥

दादू नीका नाँव है, आप कहै समझाइ ।
और आरंभ[3] सब छाड़ि दे, राम नाम ल्यौ लाइ ॥ ८ ॥

राम भजन का सोच क्या, करताँ होइ सो होइ ।
दादू राम सँभालिये, फिरि बूझिये न कोइ ॥ ९ ॥

राम तुम्हारे नाँव बिन, जे मुख निकसै और ।
तो इस अपराधी जीव कौं, तीन लोक कत ठौर ॥१०॥

छिन छिन राम सँभालताँ, जे जिव जाइ त जाउ ।
आतम के आधार कौं, नाहीं आन उपाउ ॥ ११ ॥

---

१ प्रमाण । २ ग्र० वि० प्र० पुस्तक में "चेतनि" है । ३ नया काम ।

एक महूरत मन रहै, नाँव निरंजन पास ।
दादू तब हीं देखताँ, सकल करम का नास ॥ १२ ॥

सहजै हीं सब होइगा, गुण इन्द्री का नास ।
दादू राम सँभालताँ, कटै करम के पास[1] ॥ १३ ॥

राम नाम गुर सबद सौं, रे मन पेलि भरम ।
निहकरमी सौं मन मिल्या, दादू काटि करम ॥ १४ ॥

एक राम के नाँव बिन, जिव की जरनि न जाइ ।
दादू केते पचि मुए, करि करि बहुत उपाइ ॥ १५ ॥

एक राम की टेक गहि, दूजा सहज सुभाइ ।
राम नाम छाड़ै नहीं, दूजा आवै जाइ ॥ १६ ॥

दादू राम अगाध है, परिमित नाहीं पार ।
अबरण बरण न जाणिये, दादू नाँइ[2] अधार ॥ १७ ॥

दादू राम अगाध है, अबिगति लखै न कोइ ।
निर्गुण सर्गुण का कहै, नाँइ[2] बिलंबन[3] होइ ॥ १८ ॥

दादू राम अगाध है, बेहद लख्या न जाइ ।
आदि अंत नहिं जाणिये, नाँव निरंतर गाइ ॥ १९ ॥

दादू राम अगाध है, अकल अगोचर एक ।
दादू नाँइ[2] बिलंबिये,[3] साधू कहैं अनेक ॥ २० ॥

[दादू] एकै अल्लह राम है, समरथ साईं सोइ ।
मैदे के पकवा[illegible] होइ सो होइ ॥ २१ ॥

सर्गुण नि[illegible] ।
हरि सुमरि[illegible] कीन्ह ॥ २२ ॥

दादू सिरजनहार के, केते नाँव अनंत ।
चित आवै सो लीजिये, यौं साधू सुमिरैं संत ॥ २३ ॥
[दादू] जिन प्रान पिंड हम कौं दिया, अंतरि सेवैं ताहि ।
जे आवै औसान सिरि, सोई नाँव सँबाहि[1] ॥ २४ ॥

॥ चितावनी ॥

[दादू] ऐसा कौण अभागिया, कछू दिढ़ावै और ।
नाँव बिना पग धरन कूँ, कहौ कहाँ है ठौर ॥ २५ ॥
[दादू] निमिष न न्यारा कीजिये, अंतर थैं उरि नाम ।
कोटि पतित पावन भये, केवल कहताँ राम ॥ २६ ॥
[दादू] जे तैं अब जाण्या नहीं, राम नाम निज सार ।
फिरि पीछैं पछिताहिगा, रे मन मूढ़ गँवार ॥ २७ ॥
दादू राम सँभालि ले, जब लग सुखी सरीर ।
फिरि पीछैं पछिताहिगा, जब तन मन धरै न धीर ॥२८॥
दुख दरिया संसार है, सुख का सागर राम ।
सुख सागर चलि जाइये, दादू तजि बेकाम ॥ २९ ॥
[दादू] दरिया यहु संसार है, राम नाम निज नाव ।
दादू ढील न कीजिये, यहु अवसर यहु डाव[2] ॥ ३० ॥
मेरे संसा को नहीं, जीवन मरन का राम ।
सुपिनैं हीं जिनि बीसरै, मुख हिरदै हरि नाम ॥ ३१ ॥
दादू दुखिया तब लगै, जब लग नाँव न लेहि ।
तब ही पावन परम सुख, मेरी जीवन येहि ॥ ३२ ॥
कछु न कहावै आप कूँ[3], साईं कूँ सेवै ।
दादू दूजा छाड़ि सब, नाँव निज लेवै ॥ ३३ ॥

---

१ समाय । २ दाव । ३ अपनी प्रशंसा की चाह न रक्खे ।

जे षित चिहुटै राम सूँ, सुमिरण मन लागै ।
दादू आतम जीव का, संसा सब भागै ॥ ३४ ॥

दादू पिव का नाँव ले, तौ मेटै सिर साल ।
घड़ी महूरत चालना, कैसी आवै काल्ह ॥ ३५ ॥

दादू औसर जीवतैं, कह्या न केवल राम ।
अँत काल हम कहैंगे, जम बैरी सूँ काम ॥ ३६ ॥

[दादू] ऐसे महँगे मोल का, एक साँस जे जाइ ।
चौदह लोक समान सो, काहे रेत मिलाइ ॥ ३७ ॥

सोई साँस सुजान नर, साईं सेती लाइ ।
करि साटा[1] सिरजनहार सूँ, महँगे मोल बिकाइ ॥ ३८ ॥

जतन करै नहिं जीव का, तन मन पवना फेरि ।
दादू महँगे मोल का, द्वै दो वटी इक सेर[2] ॥ ३९ ॥

[दादू] रावत राजा राम का, कदे[3] न बिसारी नाँव ।
आतम राम सँभालिये, तौ सूबस[4] काया गाँव ॥ ४० ॥

[दादू] अहनिसि सदा सरीर में, हरि चिंतत दिन जाइ ।
प्रेम मगन लय लीन मन, अँतर गति ल्यौ लाइ ॥४१॥

निमिष एक न्यारा नहीं, तन मन मंझि समाइ ।
एक अँग लागा रहै, ता कूँ काल न खाइ ॥ ४२ ॥

[दादू] पिंजर पिंड सरीर का, सुवटा[5] सहजि समाइ ।
रमिता सेती रमि रहै, बिमल बिमल जस गाइ ॥४३॥

अबिनासी सौं एक ह्वै, निमिष न इत उत जाइ ।
बहुत बिलाई क्या करे, जे हरि हरि सबद सुणाइ ॥४४॥

---

१ सट्टा; एक वस्तु के दाम के बदले दूसरी वस्तु देना। २ तन मन और साँस को फेर कर अभ्यास न करना गोया इस अनमोल जीवन को दो धोती और सेर भर अन्न के लिये बेच देना है। ३ कधी, कभी। ४ अच्छा बासा। ५ तोता।

[दादू] जहाँ रहूँ तहँ राम सूँ, भावै कंदलि[1] जाइ ।
भावै गिर परबस रहूँ, भावै गेह बसाइ ॥ ४५ ॥
भावै जाइ जलहरि[2] रहूँ, भावै सोस नवाइ[3] ।
जहाँ तहाँ हरि नाँव सूँ, हिरदै हेत लगाइ ॥ ४६ ॥

॥ चेतावनी ॥

[दादू] राम कहे सब रहत है, नख सिख सकल सरीर ।
राम कहे बिन जात है, समझो मनवाँ बीर ॥ ४७ ॥
[दादू] राम कहे सब रहत है, लाहा[4] मूल सहेत
राम कहे बिन जात है, मूरख मनवाँ चेत ॥ ४८ ॥
[दादू] राम कहे सब रहत है, आदि अंत लौं सोइ ।
राम कहे बिन जात है, यहु मन बहुरि न होइ ॥ ४९ ॥
[दादू] राम कहे सब रहत है, जीव ब्रह्म की लार ।
राम कहे बिन जात है, रे मन हो हुसियार ॥ ५० ॥
हरि भजि साफिल[5] जीवना, पर उपगार समाइ ।
दादू मरणा तहँ भला, जहँ पसु पंखी[6] खाइ ॥ ५१ ॥
[दादू] राम सबद मुख ले रहै, पीछे लागा जाइ ।
मनसा बाचा कर्मना, तेहि तत[7] सहज समाइ ॥ ५२ ॥
[दादू] रचि मचि लागे नाँव सूँ, राते माते होइ ।
देखैंगे दीदार कूँ, सुख पावैंगे सोइ ॥ ५३ ॥
[दादू] साईं सेवैं सब भले, बुरा न कहिये कोइ ।
सारौं माहैं[8] सो बुरा, जिस घट नाँव न होइ ॥ ५४ ॥
दादू जियरा राम बिन, दुखिया येहि संसार ।
उपजै बिनसै खपि मरै, सुख दुख बारम्बार ॥ ५५ ॥

---

१ गुफा । २ जल बास करूँ । ३ उलटा लटकूँ । ४ लाभ । ५ साफल्य = सुफल । ६ पक्षी । ७ तत्व । ८ सभौं में ।

राम नाम रुचि ऊपजे, लेवै हित चित लाइ ।
[दादू] सोई जीयरा, काहे जमपुर जाइ ॥ ५६ ॥

[दादू] नीको बरियाँ[१] आइ करि, राम जपि लीन्हा ।
आतम साधन सोधि करि, कारज भल कीन्हा ॥ ५७ ॥

[दादू] अगम बस्त पानैं पड़ी,[२] राखो मंझि छिपाइ ।
छिन छिन सोई सँभालिये, मति वै बीसरि जाइ ॥ ५८ ॥

॥ नाम महिमा ॥

दादू उज्जल निर्मला, हरि रँग राता होइ ।
काहे दादू पचि मरै, पानी सेती धोइ ॥ ५९ ॥

सरीर सरोवर राम जल, माहैं संजम सार ।
दादू सहजैं सब गये, मन के मैल बिकार ॥ ६० ॥

[दादू] राम नामं जलं कृत्वा, स्नानं सदा जित:[३] ।
तन मन आतम निर्मलं, पंच भूपापंगत:[४] ॥ ६१ ॥

[दादू] उत्तम इंद्री निग्रहं, मुच्यते[५] माया मन: ।
परम पुरुष पुरातनं, चिंतते सदातन:[६] ॥ ६२ ॥

दादू सब जग बिष भरया, निर्बिष बिरला कोइ ।
सोइ निर्बिष होइगा, [जा के] नाँव निरंजन होइ ॥ ६३ ॥

दादू निर्बिष नाँव सैाँ, तन मन सहजैं होइ ।
राम निरोगा करैगा, दूजा नाहीं कोइ ॥ ६४ ॥

ब्रह्म भगति जब ऊपजै, तब माया भगति बिलाइ ।
दादू निर्मल मल गया, ज्यूँ रबि तिमिर नसाइ ॥ ६५ ॥

१ विरियाँ=समय। २ हाथ लगी। ३ नागरी प्रचारनी सभा की पुस्तक में "मतिः" है। ४ पंच भूप अपंगतः अर्थात पाँचो इंद्रियाँ जो राजा के समान बलवान हैं अपंग या पंगुल यानी निर्बल हो गईं। ५ छूट जाना। ६ नित्य प्रति।

दादू विषै विकार सौं, जब लग मन राता ।
तब लग चीत न आवई, त्रिभवन-पति दाता ॥ ६६ ॥
[दादू] का जाणौं कब होइगा, हरि सुमिरन इक-तार
का जाणौं कब छाड़ि है, यहु मन विषै विकार ॥ ६७
है सो सुमिरण होता नहीं, नहीं सु कीजै काम ।
दादू यहु तन यौं गया, क्यूं करि पइये राम ॥ ६८ ॥
दादू राम नाम निज मोहनी, जिन मोहे करतार ।
सुर नर संकर मुनि जना, ब्रह्मा सृष्टि बिचार ॥ ६९ ॥
[दादू] राम नाम निज औषधी, काटै कोटि विकार ।
बिषम ब्याधि थैं ऊबरै, काया कंचन सार ॥ ७० ॥
[दादू] निर्बिकार निज नाँव ले, जीवन इहै उपाइ ।
दादू कृत्रिम काल है, ता के निकट न जाइ ॥ ७१ ॥

॥ सुमिरन विधि ॥

मन पवना गहि सुरति सौं, दादू पावै स्वाद ।
सुमिरण मा हैं सुख घणा, छाड़ि देहु बकबाद ॥ ७२
नाँव सपीड़ा[1] लीजिये, प्रेम भगति गुन गाइ ।
दादू सुमिरण प्रीति सौं, हेत सहित ल्यौ लाइ ॥ ७३
प्रान कँवल मुखि राम कहि, मन पवना मुखि राम ।
दादू सुरति मुख राम कहि, ब्रह्म सुन्न निज ठाम ॥७४
[दादू] कहता सुणता राम कहि, लेता देता राम ।
खाता पीता राम कहि, आतम कँवल बिसराम ॥ ७५
ज्यूँ जल पैसे दूध मैं, ज्यूँ पाणी मैं लौण[2] ।
ऐसैं आतम राम सौं, मन हठ साधै कौण ॥ ७६ ॥

---

१ दर्द के साथ । २ नोन ।

[दादू] राम नाम मैं पैसि करि, राम नाम ल्यौ लाइ ।
यहु इकंत त्रय लोक मैं, अनत काहे कौं जाइ ॥ ७७ ॥

ना घर भला न बन भला, जहाँ नहीं निज नाँव ।
दादू उनमुनि मन रहै, भला न सोई ठाँव ॥ ७८ ॥

[दादू] निर्गुणं नामं मई, हृदय भाव प्रवर्तितं ।
भर्मं कर्मं कलि बिषं, माया मोहं कंपितं ॥ ७९[1] ॥

कालं जालं सोचितं, भयानक जम किंकरं ।
हर्षं मुदितं सतगुरं, दादू अविगति दर्शनं ॥ ८०[1] ॥

[दादू] सब सुख सरग पयाल[2] के, तोल तराजू वाहि ।
हरि सुख एक पलक्क का, ता सम कह्या न जाइ ॥ ८१ ॥

[दादू] राम नाम सब को कहै, कहिबे बहुत बिमेक ।
एक अनेकौं फिरि मिले, एक समाना एक ॥ ८२ ॥

दादू अपणी अपणी हद्द मैं, सब को लेवै नाँव ।
जे लागे बेहद्द सौं, तिन की बलि मैं जाँव ॥ ८३ ॥

कोण पटंतर[3] दीजिये, दूजा नाहीं कोइ ।
राम सरीखा राम है, सुमिर्‍याँ ही सुख होइ ॥ ८४ ॥

अपणी जाणै आप गति, और न जाणै कोइ ।
सुमिरि सुमिरि रस पीजिये, दादू आनँद होइ ॥ ८५ ॥

[दादू] सब ही बेद पुरान पढ़ि, मेटि नाँव निरधार ।
सब कुछ इन हीं माहिँ है, क्या करिये बिस्तार ॥ ८

---

१ नं० ७६ और ८० साखियों का अर्थ यह है कि निर्गुन काम में जब चि[त्त]
लग जाता है तब भ्रम (मिथ्या ज्ञान,) कर्म (पुन्य पाप), कलि विष (सांसा[रिक]
दोष) माया, मोह, काल (समय-कृत बंधन) जाल (बंधन), शोक और मृत्यु
भय, ये सब हट जाते हैं; और हर्ष, आनन्द, सतगुरु और शब्दज्ञान प्राप्त [होते]
हैं। २ पाताल। ३ उपमा।

पढ़ि पढ़ि थाके पंडिता, किनहुँ न पाया पार।
कथि कथि थाके मुनि जना, दादू नाँइ[1] अघार ॥ ८७ ॥
निगम हिँ अगम बिचारिये, तऊ पार न आवै।
ता थैं सेवक क्या करै, सुमिरन ल्यौ लावै ॥ ८८ ॥
[दादू] अलिफ एक अल्लाह का, जे पढ़ि करि जाणै कोइ।
कुरान कतेबा इलम सब, पढ़ि करि पूरा होइ ॥ ८९ ॥
दादू यहु तन पिंजरा, माहीं मन सूवा।
एकै नाँव अलाह का, पढ़ि हाफिज हूवा ॥ ९० ॥
नाँव लिया तब जाणिये, जे तन मन रहै समाइ।
आदि अंत मध एक रस, कबहूँ भूलि न जाइ ॥ ९१ ॥

॥ बिरह पतिव्रत ॥

[दादू] एकै दसा अनन्य[2] की, दूजी दसा न जाइ।
आपा भूलै आन सब, एकइ रहै समाइ ॥ ९२ ॥
दादू पीवै एक रस, बिसरि जाइ सब और।
अविगति यहु गति कीजिये, मन राखो येहि ठौर ॥९३॥
आतम चेतन कीजिये, प्रेम रसस पीवै।
दादू भूलै देह गुण, ऐसैं जन जीवै ॥ ९४ ॥
कहि कहि केते थाके दादू, सुणि सुणि कहु का लेइ।
लूण मिलै गलि पाणियाँ, ता सनि[3] चित यौं देइ ॥ ९५ ॥
दादू हरि रस पीवताँ, रतो बिलंब न लाइ।
बारबार सँभालिये, मति वै बीसरि जाइ ॥ ९६ ॥
[दादू] जागत सुपना ह्वै गया, चिंतामणि जब जाइ।
तब हीं साचा होत है, आदि अंत उर लाइ ॥ ९७ ॥

---

१ नाम। २ केवल एक की भक्ति या सरन जिसमें दूसरे का ध्यान या सहारा नाम मात्र को न हो। ३ से।

नाँव न आवै तब दुखी, आवै सुख संतोष ।
दादू सेवक राम का, दूजा हरष न सोक ॥ ९८ ॥
मिलै तो सब सुख पाइये, बिछुरे बहु दुख होइ ।
दादू सुख दुख राम का, दूजा नाहीं कोइ ॥ ९९ ॥
दादू हरि का नाँव जल, मैं मीन ता माहिं ।
संग सदा आनँद करै, बिछुरत ही मरि जाहि ॥ १०० ॥
दादू राम बिसारि करि, जीवैं केहिं आधार ।
ज्यूँ चातृक जल बूँद कौं, करै पुकार पुकार ॥ १०१ ॥
हम जीवैं इहि आसरै, सुमिरण के आधार ।
दादू छिटकै हाथ थैं, तौ हम कौं वार न पार ॥ १०२ ॥
[दादू]नाँव निमति[1] रामहिं भजै,भगति निमति भजि सोइ ।
सेवा निमति साइँ भजै, सदा सजीवनि होइ ॥ १०३ ॥
[दादू] राम रसाइन नित चवै[2] , हरि है हीरा साथ ।
सो धन मेरे साइयाँ, अलख खजीना[3] हाथ ॥ १०४ ॥
हिरदै राम रहै जा जन के, ताकौं ऊरा[4] कौण कहै ।
अठ सिधि नौनिधि ता के आगे, सनमुख सदा रहै ॥१०५॥
बंदित तीनौं लोक बापुरा, कैसैं दरस लहै ।
नाँव निसान सकल जग ऊपरि, दादू देखत है ॥ १०६ ॥
दादू सब जग नीधना, धनवंता नहिं कोइ ।
सो धनवंता जानिये, (जा के) राम पदारथ होइ ॥१०७॥
संगहिं लागा सब फिरै, राम नाम के साथ ।
चिंतामणि हिरदै बसै, तौ सकल पदारथ हाथ ॥ १०८ ॥

---

१ निमित्त । २ चुवै । ३ ख़ज़ाना । ४ ऊरा = वरे, पीछे । एक लिपि में "कूरा" है और एक में "ऊना" ।

दादू आनँद आतमा, अबिनासी के साथ ।
प्राणनाथ हिरदै बसै, तो सकल पदारथ हाथ ॥ १०९ ॥
[दादू] भावै तहाँ छिपाइये, साच न छाना होइ ।
सेस रसातल गगन धू[1], परगट कहिये सोइ ॥११० ॥
[दादू] कहँ था नारद मुनि जना, कहाँ भगत प्रहलाद ।
परगट तीनिउँ लोक मैं, सकल पुकारैं साध ॥ १११ ॥
[दादू] कहँ सिव बैठा ध्यान धरि, कहाँ कबीरा नाम ।
सो क्यौं छाना होइगा, जे रे कहैगा राम ॥ ११२ ॥
[दादू] कहाँ लोन सुकदेव था, कहँ पीपा रैदास ।
दादू साचा क्यौं छिपै, सकल लोक परकास ॥ ११३ ॥
[दादू] कहँ था गोरख भरथरी, अनंत सिधौं का मंत ।
परगट गोपीचंद है, दत्त कहैं सब संत ॥ ११४ ॥
अगम अगोचर राखिये, करि करि कोटि जतन ।
दादू छाना क्यौं रहै, जिस घटि राम रतन ॥ ११५ ॥
दादू सरग पयाल मैं, साचा लेवै नाँव ।
सकल लोक सिर देखिये, परगट सब ही ठाँव ॥ ११६ ॥
सुमिरन का संसा रह्या, पछितावा मन माहिँ ।
दादू मीठा राम रस, सगला पीया नाहिँ ॥ ११७ ॥
दादू जैसा नाँव था, तैसा लीया नाहिँ ।
हौस रही यहु जीव मैं, पछितावा मन माहिँ ॥ ११८ ॥

॥ नाम बिसारने का दंड ॥

दादू सिर करवत[2] बहै, बिसरै आतम राम ।
माहिँ कलेजा काटिये, जीव नहीँ बिस्राम ॥ ११९ ॥

---

१ ध्रु तारा । २ करोत = आरा ।

दादू सिर करवत बहै, राम रिदै थी[1] जाइ ।
माहिँ कलेजा काटिये, काल दसौं दिसि खाइ ॥ १२० ॥

दादू सिर करवत बहै, अंग परस नहिँ होइ ।
माहिँ कलेजा काटिये, यहु बिथा न जाणै कोइ ॥ १२१ ॥

दादू सिर करवत बहै, नैनहुँ निरखै नाहिँ ।
माहिँ कलेजा काटिये, साल रह्या मन माहिँ ॥ १२२ ॥

जेता पाप सब जग करै, तेता नाँव बिसारैं होइ ।
दादू राम सँभालिये, तौ एता डारै धोइ ॥ १२३ ॥

[दादू] जब ही राम बिसारिये, तब ही मोटी मार ।
खंड खंड करि नाखिये,[2] बीज पड़ै तेहि बार ॥ १२४ ॥

[दादू] जब ही राम बिसारिये, तब ही झंपै[3] काल ।
सिर ऊपरि करवत बहै, आइ पड़ै जम जाल ॥ १२५ ॥

[दादू] जब ही राम बिसारिये, तब ही कंध[4] बिनास ।
पग पग परलय पिंड पड़ै, प्राणी जाइ निरास ॥ १२६ ॥

[दादू] जब ही राम बिसारिये, तब ही हाना[5] होइ ।
प्राण पिंड सरबस गया, सुखी न देख्या कोइ ॥ १२७ ॥

॥ नाम रत्न-कोष ॥

साहिब जी के नाँव माँ, बिरहा पीड़ पुकार ।
तालाबेली[6] रोवणाँ, दादू है दीदार ॥ १२८ ॥

॥ सुमिरन विधि ॥

साहेब जी के नाव माँ, भाव भगति बेसास[7] ।
ले समाधि लागा रहै, दादू साईं पास ॥ १२९ ॥

---

१ से । २ डालिये । ३ झपटै । ४ कंद=विलाप, शोक । ५ हानि, घाटा । ६ तड़प, बेकली । ७ विश्वास ।

साहेब जी के नाँव माँ, मति बुधि ज्ञान बिचार ।
प्रेम प्रीति इसनेह सुख, दादू जोति अपार ॥ १३० ॥
साहेब जी के नाँव माँ, सभ कुछ भरे भँडार ।
नूर तेज अनंत है, दादू सिरजनहार ॥ १३१ ॥
जिस मैं सब कुछ सो लिया, नीरंजन का नाउँ ।
दादू हिरदे राखिये, मैं बलिहारी जाउँ ॥ १३२ ॥

इति सुमिरन को अंग समाप्त ॥ २ ॥

३-बिरह को अंग

॥ विरह व्यथा ॥

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुरु देवत:।
वंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगत: ॥ १ ॥
रतिवंती आरति करै, राम सनेही आव।
दादू औसर अब मिलै, यहु बिरहिनि का भाव ॥ २ ॥
पीव पुकारै बिरहिनी, निस दिन रहै उदास।
राम राम दादू कहै, तालाबेली[1] प्यास ॥ ३ ॥
मन चित चातक ज्यूँ रटै, पिव पिव लागी प्यास।
दादू दरसन कारने, पुरवहु मेरी आस ॥ ४ ॥
[दादू] बिरहिनि दुख कासनि[2] कहै, कासनि देइ सँदेस।
पंथ निहारत पीव का, बिरहिनि पलटे केस[3] ॥ ५ ॥
[दादू] बिरहिनि दुख कासनि कहै, जानत है जगदीस ॥
दादू निस दिन बहि रहै, बिरहा करवत सीस[4] ॥ ६ ॥
सबद तुम्हारा ऊजला, चिरिया[5] क्यौं कारी।
तुही तुही निस दिन करौं, बिरहा की जारी ॥ ७ ॥
बिरहिनि रोवै रात दिन, झूरै मनहीं माहिं।
दादू औसर चलि गया, प्रीतम पाये नाहिं ॥ ८ ॥
[दादू] बिरहिनि कुरलै कुंज ज्यूँ[6], निस दिन तलफत जाइ।
राम सनेही कारणे, रोवत रैनि बिहाइ ॥ ९ ॥
पासैं बैठा सब सुनै, हम कौं ज्वाब न देइ।
दादू तेरे सिर चढ़ै, जीव हमारा लेइ ॥ १० ॥

---

१ व्याकुलता। २ किस से। ३ बाल सपेद हो गये। ४ बिरह की पीर रात दिन मारा सिर पर चला रही है। ५ चिड़िया का अभिप्राय " मति " से है। ६ जैसे कुँज चिड़िया कुरेल करती या चिल्लाती है।

सब कौं सुखिया देखिये, दुखिया नाहीं कोइ ।
दुखिया दादू दास है, ऐन[1] परस नहिं होइ ॥ ११ ॥
साहिब मुखि बोलै नहीं, सेवक फिरै उदास ।
यहु बेदन[2] जिय मैं रहै, दुखिया दादू दास ॥ १२ ॥
पिव बिन पल पल जुग भया, कठिन दिवस क्यूँ जाइ ।
दादू दुखिया राम बिन, काल रूप सब खाइ ॥ १३ ॥
दादू इस संसार मैं, मुझ सा दुखी न कोइ ।
पीव मिलन के कारणे, मैं जल भरिया रोइ ॥ १४ ॥
ना वहु मिलै न मैं सुखी, कहु क्यूँ जीवन होइ ।
जिन मुझ कौं घायल किया, मेरी दारू[3] सोइ ॥ १५ ॥
दरसन कारन बिरहिनी, बैरागिन होवै ।
दादू बिरह बियोगिनी, हरि मारग जोवै ॥ १६ ॥
अति गति आतुर मिलन कौं, जैसे जल बिन मीन ।
सो देखै दीदार कौं, दादू आतम लीन ॥ १७ ॥
राम बिछोही बिरहिनी, फिरि मिलन न पावै ।
दादू तलफै मीन ज्यूँ, तुझ दया न आवै ॥ १८ ॥

॥ बिरह लगन ॥

[दादू] जब लग सुरति सिमटै नहीं, मन निहचल नहिं होइ ।
तब लग पिव परसै नहीं, बड़ी बिपति यह मोहिं ॥ १९ ॥
ज्यूँ अमली के चित अमल है, सूरे के संग्राम ।
निरधन के चित धन बसै, यौं दादू के राम ॥ २० ॥
ज्यूँ चातक के चित जल बसै, ज्यूँ पानी बिन मीन ।
जैसे चंद चकोर है, ऐसैं [दादू] हरि सौं कीन्ह ॥ २१ ॥

---

१ आँख नहीं लगती । २ पीड़ा । ३ दवा ।

ज्यूँ कुंजर के मन बसै, अनलपंखि आकास ।
यूँ दादू का मन राम सौँ, यूँ बैरागी बनखँड बास ॥२२

भँवरा लुबधी बास का, मोह्या नाद कुरंग ।
यौँ दादू का मन राम सौँ, (ज्यूँ) दीपक जोति पतंग ॥२३

स्रवना राते नाद सौँ, नैना राते रूप ।
जिभ्या राती स्वाद सौँ, (त्यौँ) दादू एक अनूप ॥ २४ ॥

देह पियारी जीव कौँ, निस दिन सेवा माहिँ ।
दादू जीवन मरण लौँ कब हूँ छाड़ी नाहिँ ॥ २५ ॥

देह पियारी जीव कौँ, जीव पियारा देह ।
दादू हरि रस पाइये, जे ऐसा होइ सनेह ॥ २६ ॥

दादू हर दम माहिँ दिवान[1], सेज हमारी पीव है ।
देखौँ सो सुबहान[2], ये इसक[3] हमारा जीव है ॥ २७ ॥

दादू हर दम माहिँ दिवान, कहूँ दरूनै[4] दरस सौँ ।
दरस दरूनै जाइ, जब देखौँ दीदार कौँ ॥ २८ ॥

॥ बिरह बिनती ॥

दादू दरूनै दरदवंद, यहु दिल दरद न जाइ ।
हम दुखिया दीदार के, मिहरबान दिखलाइ ॥ २९ ॥

मूए पीड़ पुकारताँ, बैद न मिलिया आइ ।
दादू थोड़ी बात थी, जे टुक दरस दिखाइ ॥ ३० ॥

[दादू] मैं भिख्यारी मंगिता, दरसन देहु दयाल ।
तुम दाता दुखभंजिता, मेरी करहु सँभाल ॥ ३१ ॥

---

१ अंतर के दर्द से बावला हो रहा हूँ । २ ख़ुदा की पाक ज़ात । ३ मे ।
४ अंतरी ।

॥ छिन बिछोह ॥

क्या जीये मैं जीवणाँ, बिन दरसन बेहाल ।
दादू सोई जीवणाँ, परगट दरसन लाल[1] ॥ ३२ ॥
येहि जग जीवन सो भला, जब लग हिरदै राम ।
राम बिना जे जीवना, सो दादू बेकाम ॥ ३३ ॥
दादू कहु दीदार की, साईं सेती बात ।
कब हरि दरसन देहुगे, यहु अवसर चलि जात ॥ ३४ ॥
बिथा तुम्हारे दरस को, मोहिं ब्यापै दिन रात ।
दुखी न कीजै दीन कौं, दरसन दीजै तात ॥ ३५ ॥
[दादू] इस हियड़े ये साल, पिव बिन क्यौंहि न जाइसी ।
जब देखौं मेरा लाल, तब रोम रोम सुख आइसी ॥ ३६ ॥
तूँ है तैसा परकास करि, अपना आप दिखाइ ।
दादू कौं दीदार दे, बलि जाऊँ बिलँब न लाइ ॥ ३७ ॥
[दादू] पिव जी देखे मुज्झ कौं, हौं भी देखौं पीव ।
हौं देखौं देखत मिलै, तो सुख पावै जीव ॥ ३८ ॥
[दादू कहै] तन मन तुम परि वारणै[2], करि दीजै कै बार ।
जे ऐसी बिधि पाइये, तो लीजै सिरजनहार ॥ ३९ ॥
दीन दुनी सदकै[2] करौं, टुक देखण दे दीदार ।
तन मन भी छिन छिन करौं, भिस्त दोजग[3] भी वार ॥ ४० ॥
[दादू] हम दुखिया दीदार के, तूँ दिल थैं दूरि न होइ ।
भावै हम कौं जालि दे, हूणाँ है सो होइ ॥ ४१ ॥
[दादू कहै] जो कुछ दिया हमकौं, सो सब तुमहीं लेहु ।
तुम बिन मन मानै नहीं, दरस आपणा देहु ॥ ४२ ॥

---

१ जीवन फल यही है कि प्रीतम से मिलाप हो [त्रिकुटी का गुरु स्वरूप लाल रंग का है]। २ न्योछावर। ३ स्वर्ग और नर्क।

दूजा कुछ माँगौं नहीं, हम कौं दे दीदार ।
तूँ है तब लग एकटग[1], दादू के दिलदार ॥ ४३ ॥
[दादू कहै] तूँ है तैसी भगति दे, तूँ है तैसा प्रेम ।
तूँ है तैसी सुरति दे, तूँ है तैसा खेम[2] ॥ ४४ ॥
[दादू कहै] सदिकै[3] करौं सरीर कौं, बेर बेर बहु भंत[4] ।
भाव भगति हित प्रेम ल्यौ, खरा पियारा कंत ॥ ४५ ॥
दादू दरसन की रली[5], हम कौं बहुत अपार ।
क्या जाणौं कब हीं मिलै, मेरा प्राण अधार ॥ ४६ ॥

दादू कारण कंत के, खरा दुखी बेहाल ।
मीरा[6] मेरा मिहर करि, दे दरसन दरहाल ॥ ४७ ॥
तालाबेली प्यास बिन, क्यौं रस पीया जाइ ।
बिरहा दरसन दरद सौं, हम कौं देहु खुदाय[7] ॥ ४८ ॥
तालाबेली पीड़ सौं, बिरहा प्रेम पियास ।
दरसन सेती दीजिये, बिलसै दादू दास ॥ ४९ ॥
[दादू कहै] हम कौं अपणाँ आप दे, इस्क मुहब्बत दर्द ।
सेज सुहाग सुख प्रेम रस, मिलि खेलैं लापर्द[8] ॥ ५० ॥
प्रेम भगति माता रहै, तालाबेली अंग ।
सदा सपीड़ा[9] मन रहै, राम रमै उन संग ॥ ५१ ॥
प्रेम मगन रस पाइये, भगति हेत रुचि भाव ।
बिरह बिसास[10] निज नाँवसौं, देव दया करि आव ॥ ५२ ॥
गइ दसा सब बाहुड़ै[11], जे तुम प्रगटहु आइ ।
दादू ऊजड़ सब बसै, दरसन देहु दिखाइ ॥ ५३ ॥

---

१ एकटक, निरंतर । २ कुशल । ३ निछावर । ४ भाँति से, रीति से । ५ लालसा, चाह । ६ मालिक । ७ खुदा, ईश्वर । ८ वेपर्दे । ९ दर्द से भरा । १० विश्वास, प्रतीत । ११ पलट आवै ।

हम कसिहैं[1] क्या होइगा, बिड़द[2] तुम्हारा जाइ ।
पीछैं हीं पछिताहुगे, ता थैं प्रगटहु आइ ॥ ५४ ॥
मीयाँ मैंडा आव घर, बाँढी वत्ताँ लोइ ।
दुखडे मुँहिडे गये, मराँ विछोहैं रोइ ॥ ५५[3] ॥
है सो निधि नहिं पाइये, नहीं सो है भरपूर[4] ।
दादू मन मानै नहीं, ता थैं मरिये झूरि ॥ ५६ ॥
जिस घट इश्क अलाह का, तिस घट लोहि[5] न मास ।
दादू जियरे जक[6] नहीं, सिसकै साँसै साँस ॥ ५७ ॥
रत्ती रब[7] ना बीसरै, मरै सँभालि सँभालि ।
दादू सुहदा थीर है, आसिक अल्लह नालि[8] ॥ ५८ ॥

॥ कसौटी ॥

दादू आसिक रब्ब दा, सिर भी डेवै लाहि ।
अल्लह कारणि आप कौं, साँडे अंदरि भाहि ॥ ५९ [9] ॥
भोरे भोरे तन करै, डै करि कुरबाण ।
मीठा कौड़ा ना लगै, दादू तौहू साण ॥ ६०[10] ॥
जब लग सीस न सौंपिये, तब लग इसक न होइ ।
आसिक मरणै ना डरै, पिया पियाला सोइ ॥ ६१ ॥

---

१ कसने या साँसत करने से । २ प्रण । ३ हे मेरे मियाँ (मालिक) मेरे घर आव, अर्थात मेरे मन में बास कर, मैं दुहागिन लोक में फिरती हूँ, मेरे दुख बढ़ गये हैं और तेरे बियोग से मैं मरती हूँ—पं० चंद्रिका प्रसाद ।

४ " है " अर्थात " सत्य " जो अविनाशी है—" नहीं " अर्थात " असत्य " वा " माया " जो नाशमान है । ५ लोहू । ६ धोखा, डर । ७ साहिब । ८ साथ ।

९ मालिक का प्रेमी अपने सिर (आपा) को उतार कर उसके सन्मुख धरदे और प्रीतम के लिये अपने (आपा) को [विरह की] आग मे जला दे ।

१० अपने तन की प्रीतम के आगे बोटी बोटी कर के कुरबानी करे और बाँट दे फिर भी वह मधुर प्रीतम कड़वा न लगै—तब वह तुझे मिलै [साण = साथ] ।

तैं डीनौं ईं सभु, जे डीये दीदार के।
उंजे लहदी अभु, पसाईं दो पाण के ॥ ६२ ॥
विच्चौं सभो दूरि करि, अंदर बिया न पाइ।
दादू रता हिक दा, मन मोहब्बत लाइ ॥ ६३[२] ॥
इसक मोहब्बत मस्त मन, तालिब दर दीदार।
दोस्त दिल हमदम हजूर, यादगार हुसियार ॥ ६४ ॥
[दादू] आसिक एक अलाह के, फारिग[३] दुनिया दीन
तारिक[४] इस ओजूद थैं, दादू पाक अकीन ॥ ६५ ॥
आशिकाँ रह क़ब्ज़ कर्दः, दिल व जाँ रफ़्तंद।
अलह आले नूर दीदम, दिले दादू बंद ॥ ६६[५] ॥
दादू इसक अवाज सौं, ऐसैं कहै न कोइ।
दर्द मुहब्बत पाइये, साहिब हासिल होइ ॥ ६७[६] ॥
कहँ आसिक अल्लाह के, मारे अपने हाथ।
कहँ आलम ओजूद सौं, कहै जबाँ की बात[७] ॥ ६८ ॥

---

१ जो तुम अपना दीदार दोगे तो सब कुछ दे चुके—अपना रूप दिखा[illegible] जिस से सब लालसा पूरा हो जाय।

२ बीच के सब [परदे] दूर कर, अंतर में बिया=दूसरे को धसने न दे, द[illegible] दिली इश्क़ के साथ एक ही से राता माता है।

३ छुट्टी पाये हुए। ४ छोड़े हुए, बिलग।

५ इस साखी का सम्बन्ध पहली साखी नं ६५ से है यानी [वह प्रेम म[illegible] जिसमें लोक परलोक दोनौं की परवाह नहीं रहती और आपा विसर जाता है[illegible] ऐसे मार्ग को जिन गहिरे प्रेमियों ने गहा और उनके मन और सुरत उस में ध[illegible] तो मालिक का प्रचंड प्रकाश और आला नूर उन को दरसता है जिससे [illegible] फिर नहीं हट सकते।

६ प्रेम प्रेम मुख (आवाज़) से कहने से काज नहीं सरता, जब दर्द अथ[illegible] तपन रूपी बिरह से प्रेम प्राप्त हो तब मालिक से मेला हो [देखो आगे की साखी[illegible]

७ इश्क़ मजाज़ी और इश्क़ हक़ीक़ी अर्थात् वाच्य और लक्ष प्रेम में ज़म[illegible] आसमान का फ़र्क़ है।

दादू इसक अलाह का, जे कबहूँ प्रगटै आइ ।
[तौ] तन मन दिल अरवाह[1] का, सब पड़दा जलि जाइ ॥ ६९॥
अरवाह सिजदा कुनंद, वजूद रा चि कार ।
दादू नूर दादनी, आशिक़ाँ दीदार ॥ ७०[2] ॥
बिरह अगिन तन जालिये, ज्ञान अगिनि दौं लाइ ।
दादू नख सिख परजलै[3], तब राम बुझावै आइ ॥७१॥
बिरह अगिनि मैं जालिबा, दरसन के ताईं ।
दादू आतुर रोइबा, दूजा कुछ नाहीं ॥ ७२ ॥
साहिब सौं कुछ बल नहीं, जिनि[4] हठ साधै कोइ ।
दादू पीड़ पुकारिये, रोताँ होइ सो होइ ॥ ७३ ॥
ज्ञान ध्यान सब छाड़ि दे, जप तप साधन जोग ।
दादू बिरहा ले रहै, छाड़ि सकल रस भोग ॥ ७४ ॥
जहँ बिरहा तहँ और क्या, सुधि बुधि नाठे[5] ज्ञान ।
लोक वेद मारग तजे, दादू एकै ध्यान ॥ ७५ ॥
बिरही जन जीवै नहीं, जे कोटि कहैं समझाइ ।
दादू गहिला[6] ह्वै रहै, कै तलफि तलफि मरि जाइ ॥७६॥
दादू तलफै पीड़ सौं, बिरही जन तेरा ।
ससकै साईं कारणे, मिलि साहिब मेरा ॥ ७७ ॥
पड़्या पुकारे पीड़ सौं, दादू बिरही जन ।
राम सनेही चित बसै, और न भावै मन ॥ ७८ ॥

---

१ अरवाह अरबी भाषा में रूह का बहुवचन है अर्थात जीवात्मा या सुरति ; सुरति पर तन पिंडी मन और निज मन के ख़ोल चढ़े हैं।

२ दंडवत चैतन्य सुरति से करना चाहिये न कि मायक तन से, सो भक्तों की अंतर दृष्टि को प्रकाश देने वाला (नूर दादनी) भगवंत का दर्शन (दीदार) है– [इस साखी का अर्थ पं० चंद्रिका प्रसाद का दिया हुआ ठीक नहीं जान पड़ता]

३ भभक कर जलै। ४ मत। ५ नष्ट हो गये। ६ मूर्ख, बावला।

जिस घटि बिरहा राम का, उस नींद न आवै।
दादू तलफै बिरहिनी, उस पीड़ जगावै॥ ७९ ॥
सारा सूरा नींद भरि, सब कोई सोवै।
दादू घायल दरदवँद, जागै अरु रोवै॥ ८० ॥
पीड़ पुराणी ना पड़ै, जे अंतर बेध्या होइ।
दादू जीवन मरन लैाँ, पड़्या पुकारै सोइ॥ ८१ ॥
दादू बिरही पीड़ सैाँ, पड़्या पुकारै मीत।
राम बिना जीवै नहीँ, पीव मिलन की चीत[१]॥ ८२ ॥
जे कबहूँ बिरहिनि मरै, तै। सुरति बिरहिनी होइ।
दादू पिव पिव जीवताँ, मुवा भी टेरै सोइ॥ ८३ ॥
[दादू] अपनी पीड़ पुकारिये, पीड़ पराई नाहिँ।
पीड़ पुकारै सो भला, जा के करक कलेजे माहिँ॥८४॥
ज्यूँ जीवत मिरतक कारणै, गति करि नाखै[२] आप।
यैाँ दादू कारणि राम के, बिरही करै बिलाप॥ ८५ ॥
तलफि तलफि बिरहिनि मरै, करि करि बहुत बिलाप।
बिरह अगिनि मेँ जलि गई, पीव न पूछै बात॥ ८६ ॥
[दादू] कहाँ जावँ कौण पै पुकारैाँ, पीव न पूछै बात।
पिव बिन चैन न आवई, क्यैाँ भरैाँ[३] दिन रात। ८७ ॥
[दादू] बिरह बियोग न सहि सकैाँ, मो पै सह्या न जाइ।
कोई कहै। मेरे पीव कैाँ, दरस दिखावै आइ॥ ८८ ॥
[दादू] बिरह बियोग न सहि सकैाँ, निस दिन सालै मोहिँ।
कोई कहै। मेरे पीव कैाँ, कब मुख देखैाँ तोहिँ॥ ८९ ॥

---

१ चिंता, फ़िकर। २ डाले। ३ कष्ट से बिताना या पूरा करना।

[दादू] बिरह बियोग न सहि सकौं, तन मन धरै न धीर।
कोइ कहै मेरे पीव कौं, मेटै मेरो पीर ॥ ९० ॥

[दादू कहै] साध दुखी संसार में, तुम बिन रह्या न जाइ।
औरौं के आनंद है, सुख सौं रैनि बिहाइ[1] ॥ ९१ ॥

दादू लाइक हम नहीं, हरि के दरसन जोग।
बिन देखे मरि जाहिंगे, पिव के बिरह बियोग ॥ ९२

दादू सुख साईं सौं, और सबै ही दुक्ख।
देखौं दरसन पीव का, तिस ही लागै सुक्ख ॥ ९३ ॥

चंदन सीतल चंद्रमा, जल सीतल सब कोइ।
दादू बिरही राम का, इन सौं कदे[2] न होइ ॥ ९४ ॥

दादू घायल दरदवंद, अंतरि करै पुकार।
साईं सुणै सब लोक में, दादू यहु अधिकार ॥ ९५ ॥

दादू जागै जगत गुर, जग सगला सोवै।
बिरही जागै पीड़ सौं, जे घाइल होवै ॥ ९६ ॥

बिरह अगिन का दाग दे, जीवत मिरतक गोर[3]।
दादू पहिली घर किया, आदि हमारी ठौर ॥ ९७ ॥

[दादू] देखे का अचरज नहीं, अनदेखे का होइ।
देखे ऊपर दिल नहीं, अनदेखे कौं रोइ ॥ ९८ ॥

पहिली आगम बिरह का, पीछैं प्रीति प्रकास।
प्रेम मगन लैलीन मन, तहाँ मिलन की आस ॥ ९९ ॥

बिरह बियोगी मन भला, साईं का वैराग।
सहज सँतोषी पाइये, दादू मोटे[4] भाग ॥ १०० ॥

---

१ बीतती है। २ कधी, कभी। ३ कबर। ४ बड़े।

[दादू] तृषा बिना तन प्रीति न उपजै, सीतल निकट जल धरिया।
जनम लगै जिव पुणग[1] न पीवै, निर्मल दह दिसि भरिया ॥१०१॥
[दादू] षुध्या[2] बिना तन प्रीति न उपजै, बहु बिधि भोजन नेरा[3]।
जनम लगै जिव रती न चाखै, पाक पूरि बहुतेरा ॥१०२॥
[दादू] तपति[4] बिना तन प्रीति न उपजै, संगहिं सीतल छाया।
जनम लगै जिव जाणैं नाहीं, तरवर त्रिभुयन राया १०३
[दादू] चोट बिना तन प्रीति न उपजै, औषद[5] अंग रहंत।
जनम लगै जिव पलक न परसै, बूंटी अमर अनंत ॥१०४
[दादू] चोट न लागी बिरह की, पीड़ न उपजी आइ।
जागि न रोवै धाह दे,[6] सोवत गई बिहाइ ॥ १०५ ॥
दादू पीड़ न ऊपजी, ना हम करी पुकार।
ता थैं साहिब ना मिल्या, दादू बीती बार[7] ॥ १०६ ॥
अंदर पीड़ न ऊभरै, बाहर करै पुकार।
दादू सो क्यों करि लहै, साहिब का दीदार ॥ १०७ ॥
मन हीं माहैं झूरणाँ, रोवै मन हीं माहिं।
मन हीं माहैं धाह[8] दे, दादू बाहर नाहिं ॥ १०८ ॥
बिन हीं नैनौं रोवणाँ, बिन मुख पीड़ पुकार।
बिन हीं हाथौं पीटना, दादू बारंबार ॥ १०९ ॥
प्रीति न उपजै बिरह बिन, प्रेम भगति क्यों होइ।
सब झूठे दादू भाव बिन, कोटि करै जे कोइ ॥ ११० ॥

---

१ पुनिक, कदापि। २ क्षुधा, भूख। ३ पास। ४ तपन। ५ दवा। ६ धाड़ मारकर। ७ समय। ८ कराह।

[दादू] बातौं बिरह न ऊपजै, बातौं प्रीति न होइ।
बातौं प्रेम न पाइये, जिन रे पतीजे कोइ ॥ १११ ॥
दादू तौ पिव पाइये, कसमल[1] है सो जाइ।
निरमल मन करि आरसो, मूरति मांहिं[2] लखाइ ॥ ११२ ॥
दादू तौ पिव पाइये, करि मंझे[2] बीलाप।
सुनि है कबहूँ चित्त धरि, परघट होवै आप ॥ ११३ ॥
दादू तौ पिव पाइये, करि साईं की सेव।
काया माहिं लखायसी, घट ही भीतर देव ॥ ११४ ॥
दादू तौ पिव पाइये, भावै प्रीति लगाइ।
हेजैं[3] हरी बुलाइये, मोहन मंदिर आइ ॥ ११५ ॥
[दादू] जा के जैसी पीड़ है, सो तैसी करै पुकार।
को सूषिम[4] को सहज मैं, को मिरतक तेहि बार ॥ ११६ ॥
दरदहि बूझै दरदवंद, जा के दिल होवै।
क्या जाणै दादू दरद की, नींद भरि सोवै ॥ ११७ ॥
दादू अच्छर प्रेम का, कोई पढ़ैगा एक।
दादू पुस्तक प्रेम बिन, केते पढ़ैं अनेक ॥ ११८ ॥
दादू पाती प्रेम की, बिरला बाँचै कोइ।
बेद पुरान पुस्तक पढ़ैं, प्रेम बिना क्या होइ ॥ ११९ ॥
[दादू] कर बिन सर बिन कमान बिन, मारै खैंचि कसी[5]।
लागी चोट सरीर मैं, नखसिख सालै सीस ॥ १२० ॥
[दादू] भलका मारै भेद सौं, सालै मंझि पराण।
मारणहारा जानि है, कै जेहि लागै बाण ॥ १२१ ॥

१ मैल। २ घट में। ३ ऐसा उतंग प्रीत से जैसी कि गाय को बछड़े के साथ होती है कि उसके सन्मुख आतेही पनिहा जाती है यानो थन में दूध भर आता है। ४ सूक्ष्म। ५ कसकर, तानकर।

[दादू] सो सर हम कौं मारिले, जेहि सर मिलिये जाइ
निस दिन मारग देखिये, कबहूँ लागै आइ ॥ १२२ ॥
जेहि लागी सो जागि है, बेध्या करै पुकार ।
दादू पिंजर पीड़ है, सालै बारम्बार ॥ १२३ ॥
बिरही ससके[१] पीड़ सौं, ज्यौं घाइल रन माहिँ ।
प्रीतम मारे बाण भरि, दादू जीवै नाहिँ ॥ १२४ ॥
[दादू] बिरह जगावै दरद कौं, दरद जगावै जीव ।
जीव जगावै सुरति कौं, पंच पुकारै पीव ॥ १२५ ॥
दादू मारै प्रेम सौं, बेधै साध सुजाण ।
मारणहारे कौं मिलै, दादू बिरही बाण ॥ १२६ ॥
सहजैं मनसा मन सधै, सहजैं पवना सोइ ।
सहज पंचौं थिरि भये, जे चोट बिरह को होइ ॥ १२७ ॥
मारणहारा रहि गया, जेहि लागी सो नाहिँ ।
कबहूँ सो दिन होइगा, यहु मेरे मन माहिँ ॥ १२८ ॥
प्रीतम मारे प्रेम सौं, तिन कौं क्या मारै ।
दादू जारे बिरह के, तिन कौं क्या जारै ॥ १२९ ॥
दादू पड़दा पलक का, एता अंतर होइ ।
दादू बिरही राम बिन, क्यौं करि जीवै सोइ ॥ १३० ॥
काया माहैं क्यौं रह्या, बिन देखे दीदार ।
दादू बिरही बावरा, मरै नहीं तेहि बार ॥ १३१ ॥
बिन देखे जीवै नहीं, बिरहा का सहिनाण[२] ।
दादू जीवै जब लगैं, तब लग बिरह न जाण ॥ १३२ ॥
रोम रोम रस प्यास है, दादू करहि पुकार ।
राम घटा दल उमँगि करि, बरसहु सिरजनहार ॥ १३३

१ ससकै = साँस भरे । २ चिन्ह, निशान ।

प्र म जो मेरे पीव की, पैठो पिंजर माहिँ ।
रोम रोम पिउ पिउ करै, दादू दूसर नाहिँ ॥ १३४ ॥
सब घट स्रवना सुरति सौं, सब घट रसना बैन ।
सब घट नैना ह्वै रहे, दादू बिरहा ऐन ॥ १३५ ॥
रात दिवस का रोवणा, पहर पलक का नाहिँ ।
रोवत रोवत मिलि गया, दादू साहिब माहिँ ॥ १३६ ॥
[दादू] नैन हमारे बावरे, रोवैं नहिँ दिन राति ।
साईं संग न जागहीं, पिव क्यौं पूछै बात ॥ १३७ ॥
नैनहुँ नीर न आइया, क्या जानैं ये रोइ ।
तैसे हीं करि रोइये, साहिब नैनहुँ जोइ ॥ १३८ ॥
[दादू] नैन हमारे ढीठ हैं, नाले नीर न जाहिँ ।
सूके सराँ सहेत वै, करँक भये गलि माहिँ ॥ १३९ [१] ॥
[दादू] बिरह प्रेम की लहरि मैं, यह मन पंगुल होइ ।
राम नाम मैं गलि गया, बूझै बिरला कोइ ॥ १४० ॥
[दादू] बिरह अगिनि मैं जलि गये, मन के मैल बिकार ।
दादू बिरही पीउ का, देखैगा दीदार ॥ १४१ ॥
बिरह अगिनि मैं जलि गये, मन के बिषै बिकार ।
ता थैं पंगुल ह्वै रह्या, दादू दर दीदार ॥ १४२ ॥

---

१ कहावत है कि असह दुख मैं आँसू भी सूख जाते हैं इसी मसल को दादू साहिब अलंकार मैं फ़र्माते हैं कि जैसे तलैया (सरा) के जीव मछली कछुए मेंढक आदि ऐसे निडर (ढीठ) या वेपरवाह होते हैं कि तलैया से पानी के साथ बह कर नाले मैं अपनी रक्षा नहीं करते वलिक तलैया ही मैं पड़े रहते हैं और उसी के साथ (सहित) सूख कर चमड़ी (करंक) वन जाते हैं ऐसी ही दशा हमारी आँखों की है कि आँसू की धारा को त्याग कर जहाँ को तहाँ सूख या बैठ गईं । यही भावार्थ और शब्दार्थ १३९ नं० की साखी का है न कि जैसा पं० चंद्रिका प्रसाद ने लिखा है ।

[दादू] जब बिरहा आया दरद सौं, तब मीठा लागा राम ।
काया लागी काल ह्वै, कड़वे लागे काम ॥ १४३ ॥
जब राम अकेला रहि गया, तन मन गया बिलाइ ।
दादू बिरही तब सुखी, जब दरस परस मिलि जाइ ॥१४४॥
जे हम छाड़ैं राम कौं, तौ राम न छाड़ै ।
दादू अमली अमल थैं, मन क्यूँ करि काढ़ै ॥ १४५ ॥
बिरहा पारस जब मिलै, तब बिरहिनि बिरहा होइ ।
दादू परसै बिरहिनी, पिउ पिउ टेरै सोइ ॥ १४६ ॥
आसिक मासुक ह्वै गया, इसक कहावै सोइ ।
दादू उस मासूक का, अल्लाहि आसिक होइ ॥ १४७ ॥
राम बिरहिनी ह्वै गया, बिरहिनि ह्वै गई राम ।
दादू बिरहा बापुरा, ऐसे करि गया काम ॥ १४८ ॥
बिरह बिचारा ले गया, दादू हम कौं आइ ।
जहँ अगम अगोचर राम था, तहँ बिरह बिना को जाइ ॥१४९
बिरहा बपुरा आइ करि, सोवत जगावै जीव ।
दादू अंग लगाइ करि, ले पहुँचावै पीव ॥ १५० ॥
बिरहा मेरा मीत है, बिरहा बैरी नाहिं ।
बिरहा को बैरी कहै, सो दादू किस माहिं ॥ १५१ ॥
[दादू] इसक अलह की जात है, इसक अलह का अंग ।
इसक अलह औजूद है, इसक अलह का रंग ॥ १५२ ॥
[दादू] प्रीतम के पग परसिये, मुझ देखण का चाव ।
तहँ ले सीस नवाइये, जहाँ धरे थे पाँव ॥ १५३ ॥
बाट बिरह की सोधि करि, पंथ प्रेम का लेहु ।
लै के मारग जाइये, दूसर पाँव न देहु ॥ १५४ ॥

बिरहा बेगा भगति सहज मैं, आगे पीछे जाइ ।
थोड़े माहैं बहुत है, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥ १५५ ॥
बिरहा बेगा ले मिलै, तालाबेली पीर ।
दादू मन घाइल भया, सालै सकल सरीर ॥ १५६ ॥

॥ बिरह बिनती ॥

आज्ञा अपरंपार की, बसि अंबर भरतार ।
हरे पटम्बर पहिरि करि, धरती करै सिंगार ॥ १५
बसुधा सब फूलै फलै, पिरथी अनंत अपार ।
गगन गरिज जल थल भरै, दादू जैजैकार ॥ १५८
काला मुँह करि काल का, साईं सदा सुकाल ।
मेघ तुम्हारे घरि घणाँ, बरसहु दीन दयाल ॥ १५९

॥ इति बिरह को अंग समाप्त ॥ ३ ॥

[साखी १५७-१५६] आँधी नामक गाँव मैं दादू साहिब चौमासे के ऋतु मैं रहे थे वहाँ वर्षा न होने से लोगोँ की प्रार्थना पर यह तीनोँ साखियाँ बना कर बिन्ती की कि जिस पर बरखा हुई और अकाल जाता रहा ।

४—परचा को अंग

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुरु देवत: ।
वंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगत: ॥ १ ॥
[दादू] निरंतर पिउ पाइया, तहँ पंखी उनमन जाइ ।
सप्तौं मंडल भेदिया, अष्टैं[1] रह्या समाइ ॥ २ ॥
[दादू] निरंतर पिउ पाइया, जहँ निगम न पहुँचे बेद ।
तेज सरूपी पिउ बसै, कोइ बिरला जानै भेद ॥ ३ ॥
[दादू] निरंतर पिउ पाइया, तीन लोक भरपूरि ।
सब सेजौं साईं बसै, लोग बतावैं दूरि ॥ ४ ॥
[दादू] निरंतर पिउ पाइया, जहँ आनँद बारह मास ।
हंस सौं परम हंस खेलै, तहँ सेवग स्वामी पास ॥ ५ ॥
[दादू] रँग भरि खेलौं पिउ सौं, तहँ बाजै बेन रसाल ।
अकल पाट परि बैठा स्वामी, प्रेम पिलावै लाल ॥ ६ ॥
[दादू] रँग भरि खेलौं पिउ सौं, सेती दीनदयाल ।
निसु बासर नहिँ तहँ बसै, मानसरोवर पाल ॥ ७ ॥
[दादू] रँग भरि खेलौं पीउ सौं, तहँ कबहुँ न होय बियोग ।
आदि पुरुस अंतरि मिल्या, कुछ पूरबले संजोग ॥ ८ ॥
[दादू] रँग भरि खेलौं पीउ सौं, तहँ बारह मास बसंत ।
सेवग सदा अनंद है, जुग जुग देखौं कंत ॥ ९ ॥
[दादू] काया अंतर पाइया, त्रिकुटी के रे तीर ।
सहजैं आप लखाइया, ब्यापा सकल सरीर ॥ १० ॥
[दादू] काया अंतर पाइया, निरंतर निरधार ।
सहजैं आप लखाइया, ऐसा समरथ सार ॥ ११ ॥

---

१ सप्त लोक के परे ब्रह्म का आठवाँ मंडल है ।

[दादू] काया अंतर पाइया, अनहद बेन बजाइ ।
सहजैं आप लखाइया, सुन्न मँडल में जाइ ॥ १२ ॥
[दादू] काया अंतर पाइया, सब देवन का देव ।
सहजैं आप लखाइया, ऐसा अलख अभेव ॥ १३ ॥
[दादू] भँवर कँवल रस बेधिया, सुख सरवर रस पीव ।
तहँ हंसा मोती चुणैं, पिउ देखे सुख जीव ॥ १४ ॥
[दादू] भँवर कँवल रस बेधिया, गहे चरण कर हेत ।
पिउ जी परसत ही भया, रोम रोम सब सेत ॥ १५ ॥
[दादू] भँवर कँवल रस बेधिया, अनत न भरमै जाइ ।
तहाँ बास बिलंबिया, मगन भया रस खाइ ॥ १६ ॥
[दादू] भँवर कँवल रस बेधिया, गही जो पिउ की ओट ।
तहाँ दिल भँवरा रहै, कौण करै रस चोट ॥ १७ ॥

॥ जिज्ञासा ॥

[दादू] खोजि तहाँ पिउ पाइये, सबद उपन्नै[1] पास ।
तहाँ एक एकांत है, तहाँ जोति परकास ॥ १८ ॥
[दादू] खोजि तहाँ पिउ पाइये, जहँ चंद न ऊगै सूर ।
निरंतर निरधार है, तेज रह्या भरपूर ॥ १९ ॥
[दादू] खोजि तहाँ पिव पाइये, जहँ बिन जिभ्या गुण गाइ ।
तहँ आदि पुरस अलेख है, सहजैं रह्या समाइ ॥ २० ॥
[दादू] खोजि तहाँ पिउ पाइये, जहँ अजरा अमर उमँग ।
जरा मरण भै भाजसी, राखै अपणै संग ॥ २१ ॥

---

१ उत्पन्न होता है ।

दादू गाफिल छो वतै, मंझे रब्ब निहार ।
मंझेई पिउ पाण जो, मंझेई बीचार ॥ २२[1] ॥
दादू गाफिल छो वतै, आहै मंझि अलाह ।
पिरी पाण जौ पाण सैं, लहै सभोई साव[2] ॥ २३ ॥
दादू गाफिल छो वतै, आहे मंझि मुकाम ।
दरगह में दीवाण तत, पसे न बैठा पाण[3] ॥ २४
दादू गाफिल छो वतै, अंदर पिरी[4] पस ।
तखत रबाणी बच मैं, पेरे तिन्ही वस[6] ॥ २५ ॥
हरि चिंतामणि चिंतताँ, चिंता चित की जाइ[7] ।
चिंतामणि चित मैं मिल्या, तहँ दादू रह्या लुभाइ[8] ॥ २६ ॥
अपने नैनहुं आप कौं, जब आतम देखै ।
तहँ दादू परआतमा, ताही कूँ पेखै ॥ २७ ॥

॥ नाद ॥

[दादू] बिन रसना जहँ बोलिये, तहँ अंतरजामी आप ।
बिन स्रवनहुं साईं सुनै, जे कुछ कीजै जाप ॥ २८ ॥
ज्ञान लहर जहँ थैं उठै, बाणी का परकास ।
अनभै जहँ थैं ऊपजै, सबदैं किया निवास ॥ २९ ॥
सो घर सदा बिचार का, तहाँ निरंजन बास ।
तहँ तूँ दादू खोजि ले, ब्रह्म जीव के पास ॥ ३० ॥

---

१ ग़ाफ़िल इधर उधर क्या फिरता है अपने अंतरही मैँ प्रीतम को देख, तेरा प्रीतम तेरे घट मैँ आप विराजता है वहीँ उस को पहिचान। २ प्रीतम अपने ही आप सब स्वाद (साव) ले रहा है। ३ तेरे घट ही (दरगह) मैँ वह सार वस्तु अर्थात भगवंत आप विराजमान है पर तुझे नहीँ दीखता। ४ प्रीतम। ५ देख। ६ भगवंत का सिंहासन तेरे घट मैँ है तिन्हीँ के चरनोँ मैँ वासाकर। "पेरं" का अर्थ पं० चद्रिका प्रसाद ने "समीप" लिखा है परन्तु असल मैँ "पेर" या "चरन" है। ७ हरि चिंतामणि का चिंतवन करने से चित्त की सकल चिंता जाती रहती है। ८ एक लिपि मैँ "लुभाइ" की जगह "समाइ" है।

जहँ तन मन का मूल है, उपजै ओअंकार ।
अनहद सेझा[1] सबद का, आतम करै बिचार ॥ ३१ ॥
भाव भगति लै ऊपजै, सो ठाहर निज सार ।
तहँ दादू निधि पाइये, निरंतर निरधार ॥ ३२ ॥
एक ठौर सूझै सदा, निकट निरंतर ठाँउ ।
तहाँ निरंतर पूरि ले, अजरावर[2] तेहि नाँउ ॥ ३३ ॥
साधू जन क्रीला[3] करैं, सदा सुखी तेहि गाँव ।
चलु दादू उस ठौर की, मैं बलिहारी जाँव ॥ ३४ ॥
दादू पस पिरनि खे, वेही मंझि कलूब ।
बैठा आहै विच्च में, पाण जो महबूब ॥ ३५[4] ॥
नैनहुँ वाला निरखि करि, दादू घालै हाथ ॥
तब हीं पावै रामधन, निकट निरंजन नाथ ॥ ३६ ॥
नैनहुँ बिन सूझै नहीं, भूला कतहूँ जाइ ।
दादू धन पावै नहीं, आया मूल गवाइ ॥३७ ॥
जहँ आतम तहँ राम है, सकल रह्या भरपूर ।
अंतरगति ल्यौ लाइ रहु, दादू सेवग सूर ॥ ३८ ॥

॥ अंतर दृष्टि ॥

पहलो लोचन दीजिये, पीछे ब्रह्म दिखाइ ।
दादू सूझै सार सब, सुख में रहै समाइ ॥ ३९ ॥
आँधी[5] के आनँद हुआ, नैनहुँ सूझन लाग ।
दरसन देखै पीव का, दादू मोटे भाग ॥ ४० ॥

---

१ सोत निकास। २ जिसको बुढ़ापा न आवे, अमर। ३ बिलास। ४ पं० चंद्रिका प्रसाद ने इस साखी के अर्थ ठीक नहीं किये हैं—"पिरी" वा "पिरनि" का अर्थ "प्रीतम" है, न कि 'परमेश्वर" और "वेही" के अर्थ "वैठ कर" हैं जिसे पं० चं० प्र० ने "पेही = पीव" लिखा है। सारांश इस साखी का यह है कि अपने घट में वैठ कर अर्थात् ध्यान धर कर अपने प्रीतम को देख (पस) वह आप रूप यहाँ विराजमान है। ५ अंधा।

[दादू] मिहीं महल बारीक है, गाँउ न ठाँउ न नाँउ
ता सौं मन लागा रहै, मैं बलिहारी जाँउ ॥ ४१ ॥
[दादू] खेल्या चाहै प्रेम रस, आलम[1] अंग लगाइ ।
दूजे कौं ठाहर[2] नहीं, पुहपु न गंध समाइ[3] ॥ ४२ ॥

॥ अहं निषेध ॥

नाहीं ह्वै करि नाउँ ले, कुछ न कहाई रे ।
साहिब जी के सेज पर, दादू जाई रे ॥ ४३[4] ॥
जहाँ राम तहँ मैं[5] नहीं, मैं तहँ नाहीं राम ।
दादू महल बारीक है, द्वै को नाहीं ठाम ॥ ४४ ॥
मैं नाहीं तहँ मैं गया, एकै दूसर नाहिं ।
नाहीं कौं ठाहर घणी, दादू निज घर माहिं ॥ ४५ ॥
मैं नाहीं तहँ मैं गया, आगे एक अलाव[6] ।
दादू ऐसी बंदगी, दूजा नाहीं आव ॥ ४६ ॥
दादू आपा जब लगैं[7], तब लग दूजा होइ ।
जब यहु आपा मिटि गया, तब दूजा नहिं कोइ ॥ ४
[दादू] मैं नाहीं तब एक है, मैं आई तब दोइ ।
मैं तैं पड़दा मिटि गया, तब ज्यूँ था त्यूँहीं होइ ॥ ४
दादू है कौं भय घणा, नाहीं कौं कुछ नाहिं ।
दादू नाहीं ह्वै रहउ, अपणे साहिब माहिं ॥ ४९ ॥

॥ निरंजन धाम ॥

[दादू] तीनि सुन्नि आकार की, चौथी निरगुण ना॰
सहजे सुन्नि मैं रमि रह्या, जहाँ तहाँ सब ठाम ॥ ५

---

१ जक्त, दुनियाँ । २ ठौर, गुंजाइश । ३ अर्थात एक फूल में दूसरी नहीं समा सकती । ४ दीन अंग से बिना दिखावे के नाम का सुमिरन तो मालिक की सायुज्य भक्ति प्राप्त हो अर्थात उस से साक्षात मेला ५ ममता । ६ अल्लाह । ७ तक ।

पाँच तत्त के पाँच हैं, आठ तत्त के आठ ।
आठ तत्त का एक है, तहाँ निरंजन हाट ॥ ५१ ॥

[दादू] जहँ मन माया ब्रह्म था, गुण इंद्री आकार ।
तहँ मन बिरचै सबनि थैं, रचि रहु सिरजनहार ॥ ५२ ॥

काया सुन्नि पंच का बासा, आतम सुन्नि प्रान परकासा ।
परम सुन्नि ब्रह्म सौं मेला, आगे दादू आप अकेला ॥ ५३ ॥

[दादू] जहाँ थैं सब ऊपजे, चंद सूर आकास ।
पानी पवन पावक किये, धरती का परकास ॥ ५४ ॥

काल करम जिव ऊपजे, माया मन घट साँस ।
तहँ रहिता रमिता राम है, सहज सुन्नि सब पास ॥ ५५ ॥

सहज सुन्नि सब ठौर है, सब घट सबही माहिँ ।
तहाँ निरंजन रमि रह्या, कोइ गुण ब्यापै नाहिँ ॥ ५६ ॥

[दादू] तिस सरवर के तीर, सो हंसा मोती चुणैं ।
पीवैं नीझर नीर, सो है हंसा सो सुणौं ॥ ५७ ॥

[दादू] तिस सरवर के तीर, जप तप संजम कीजिये ।
तहँ सनमुख सिरजनहार, प्रेम पिलावै पीजिये ॥ ५८ ॥

[दादू] तिस सरवर के तीर, संगी[1] सबै सुहावणे ।
[त]हँ बिन कर बाजै बेन, जिभ्या-हीणे[2] गावणे ॥ ५९ ॥

[दादू] तिस सरवर के तीर, चरण कँवल चित लाइया ।
[त]हँ आदि निरंजन पीव, भाग हमारे आइया ॥ ६० ॥

[दादू] सहज सरोवर आतमा, हंसा करैं कलोल ।
[सु]ख सागर सूभर भर्या, मुक्ताहल मन मोल ॥ ६१ ॥

---

१ हंस और प्रेमी सुरतें । २ बिना जीभ के ।

[दादू] देखौं दयाल कौं, सनमुख साईं सार ।
जीधरि देखौं नैन भरि, तीधरि सिरजनहार ॥ ८० ॥
[दादू] देखौं दयाल कौं, रोकि रह्या सब ठौर ।
घटि घटि मेरा साइयाँ, तूं जिनि जाणे और ॥ ८१ ॥
[दादू] मन नाहीं मैं नहीं, नहिं माया नहिं जीव ।
दादू एकै देखिये, दह दिसि मेरा पीव ॥ ८२ ॥
[दादू] पाणी माहैं पैसि करि, देखै दृष्टि उघार ।
जैसा व्यंब[1] सब भरि रह्या, ऐसा ब्रह्म बिचार ॥ ८३ ॥
[दादू] लीन आनंद मैं, सहज रूप सब ठौर ।
दादू देखै एक कौं, दूजा नाहीं और ॥ ८४ ॥
[दादू] जहँ तहँ साखी संग हैं, मेरे सदा अनंद ।
नैन बैन हिरदे रहैं, पूरण परमानंद ॥ ८५ ॥
जगत जगपति देखिये, पूरण परमानंद ।
जीवत भी साईं मिलै, दादू अति आनंद ॥ ८६ ॥

॥ तेज पुंज ॥

दह दिसि दीपक तेज के, बिन बाती बिन तेल ।
चहुँ दिसि सूरज देखिये, दादू अद्भुत खेल ॥ ८७ ॥
सूरज कोटि प्रकास है, रोम रोम की लार ।
दादू जोति जगदीस की, अंत न आवै पार ॥ ८८ ॥
ज्यौं रवि एक अकास है, ऐसे सकल भरपूर ।
दादू तेज अनंत है, अल्लह आले[2] नूर ॥ ८९ ॥
सूरज नहिं तहँ सूरज देख्या, चंद नहीं तहँ चंदा ।
तारे नहिं तहँ झिलिमिलि देख्या, दादू अति आनंदा ॥९०॥
बादल नहिं तहँ बरसत देख्या, सबद नहीं गरजंदा ।
बीज[3] नहीं तहँ चमकत देख्या, दादू परमानंदा ॥ ९१ ॥

---

१ बिम्ब, परछाहीं । २ उच्च । ३ बिजली ।

[दादू] जोती चमकै झिलमिलै, तेज पुंज परकास।
अमृत झरै रस पीजिये, अमर बेलि आकास ॥ ९२ ॥

[दादू] अविनासी अँग तेज का, ऐसा तत्त अनूप।
सो हम देख्या नैन भरि, सुंदर सहज सरूप ॥ ९३ ॥

परम तेज परगट भया, तहँ मन रह्या समाइ।
दादू खेलै पीव सौं, नहिं आवै नहिं जाइ ॥ ९४ ॥

निराधार निज देखिये, नैनहुँ लागा बंद।
तहँ मन खेलै पीव सौं, दादू सदा अनंद ॥ ९५ ॥

ऐसा एक अनूप फल, बीज बाकुला[1] नाहिं।
मीठा निर्मल एक रस, दादू नैनहुँ माहिं ॥ ९६ ॥

हीरे हीरे तेज के, सो निरखे त्रय लोय[2]।
कोइ इक देखै संत जन, और न देखै कोय ॥ ९७ ॥

नैन हमारे नूर माँ, तहाँ रहे ल्यौ लाइ।
दादू उस दीदार कौं, निस दिन निरखत जाइ ॥ ९८ ॥

नैनहुँ आगैं देखिये, आतम अंतर सोइ।
तेज पुंज सब भरि रह्या, झिलमिलि झिलमिलि होइ ॥९९॥

अनहद बाजे बाजिये, अमरापुरी निवास।
जोति सरूपी जगमगै, कोइ निरखै निज दास ॥ १०० ॥

परम तेज तहँ मन रहै, परम नूर निज देखै।
परम जोति तहँ आतम खेलै, दादू जीवन लेखै ॥ १०१ ॥

[दादू] जरै सो जोति सरूप है, जरै सो तेज अनंत।
जरै सो झिलमिलि नूर है, जरै सो पुंज रहंत ॥ १०२ ॥

---

१ बुकला, छिलका। २ लाय = लोयन, लोचन। त्रय लोय से अभिप्राय शिव नेत्र या तीसरे तिल से है जिस के खुलने पर दिव्य दृष्टि हो जाती है।

दादू अलख अलाह का, कहु कैसा है नूर ।
दादू बेहद हद नहीं, सकल रह्या भरपूर ॥ १०३ ॥
वार पार नहिं नूर का, दादू तेज अनंत ।
कीमति नहिं करतार की, ऐसा है भगवंत ॥ १०४ ॥
निरसँधि नूर अपार है, तेज पुंज सब माहिं ।
दादू जोति अनंत है, आगौ पीछौ नाहिं ॥ १०५ ॥
खंड खंड निज ना भया, इकलस[1] एकै नूर ।
ज्यौं था त्यौंही तेज है, जोति रही भरपूर ॥ १०६ ॥
परम तेज परकास है, परम नूर नीवास ।
परम जोति आनंद मैं, हंसा दादू दास ॥ १०७ ॥
नूर सरीखा नूर है, तेज सरीखा तेज ।
जोति सरीखी जोति है, दादू खेलै सेज ॥ १०८ ॥
तेज पुंज की सुंदरी, तेज पुंज का कंत ।
तेज पुंज की सेज परि, दादू बन्या बसंत ॥ १०९ ॥
पुहुप प्रेम बरिषै सदा, हरि जन खेलैं फाग ।
ऐसा कौतिग[2] देखिये, दादू मोटे[3] भाग ॥ ११० ॥

॥ अमी वर्षा ॥

अंमृत धारा देखिये, पारब्रह्म बरिखंत
तेज पुंज झिलिमिलि झरै, को साधू जन पीवंत ॥ १

रस ही मैं रस बरखि है, धारा कोटि अनंत ।
तहँ मन निहचल राखिये, दादू सदा बसंत ॥ ११२ ॥

---

१ एकसा, यकसाँ । २ कौतुक । ३ बड़े ।

वन बादल बिन बरिखि है, नीझर निरमल धार ।
दादू भींजै आतमा, को साधू पीवनहार ॥ ११३ ॥
ऐसा अचरज देखिया, बिन बादल बरिखै मेह ।
तहँ चित चात्रग[1] ह्वै रह्या, दादू अधिक सनेह ॥ ११४ ॥
महा रस मीठा पीजिये, अबिगत अलख अनंत ।
दादू निर्मल देखिये, सहजैं सदा झरंत ॥ ११५ ॥

॥ कामधेनु ॥

कामधेनु दुहि पीजिये, अकल[2] अनूपम एक ।
दादू पीवै प्रेम सौं, निर्मल धार अनेक ॥ ११६ ॥
कामधेनु दुहि पीजिये, ता कूँ लखै न कोइ ।
दादू पीवै प्यास सौं, महारस मीठा सोइ ॥ ११७ ॥
कामधेनु दुहि पीजिये, अलख रूप आनंद ।
दादू पीवै हेत सौं, सुषमन लागा बंद ॥ ११८ ॥
कामधेनु दुहि पीजिये, अगम अगोचर जाइ ।
दादू पीवै प्रीति सौं, तेज पुंज की गाइ ॥ ११९ ॥
कामधेनु करतार है, अंमृत सरवै[3] सोइ ।
दादू बछरा दूध कौं, पीवै तौ सुख होइ ॥ १२० ॥
ऐसी एकै गाइ है, दूझै[4] बारह मास ।
सो सदा हमारे संग है, दादू आतम पास ॥ १२१ ॥

॥ अक्षय वृक्ष ॥

तरवर साखा मूल बिन, धरती पर नाहीं ।
अबिचल अमर अनंत फल, सो दादू खाहीं ॥ १२२ ॥
तरवर साखा मूल बिन, धर अंबर न्यारा[5] ।
अबिनासी आनंद फल, दादू का प्यारा ॥ १२३ ॥

---

१ एक पक्षी जिस का केवल स्वाँति बुंद आधार है। २ अखंड, अद्वितीय। ३ आप से आप चुवै। ४ दुही जाय। ५ पृथ्वी और आकाश से न्यारा।

तरवर साखा मूल बिन, रज बीरज रहिता[1]।
अजरा अमर अतीत फल, सो दादू गहिता ॥ १२४ ॥
तरवर साखा मूल बिन, उतपति परलय नाहिँ।
रहिता रमिता राम फल, दादू नैनहुँ माहिँ ॥ १२५ ॥
प्राण तरोवर सुरति जड़, ब्रह्म भोमि ता माहिँ।
रस पीवे फूलै फलै, दादू सूकै[2] नाहिँ ॥ १२६ ॥

(प्रश्न)

ब्रह्म सुन्नि तहँ क्या रहै, आतम के अस्थान।
काया अस्थल क्या बसै, सतगुर कहै सुजान ॥ १२७ ॥

(उत्तर)

काया के अस्थल रहै, मन राजा पंच प्रधान।
पचिस प्रकिरती तीन गुण, आपा गर्ब गुमान ॥ १२८
आतम के अस्थान हैँ, ज्ञान ध्यान बेसास[3]।
सहज सील संतोष सत, भाव भगति निधि पास ॥ १२९
ब्रह्म सुन्न तहँ ब्रह्म है, निरंजन निराकार।
नूर तेज जहँ जोति है, दादू देखणहार ॥ १३० ॥

(प्रश्न)

मौजूद ख़बर माबूद ख़बर, अरवाह ख़बर औजूद।
मुक़ाम चि चीज़ हस्त दादनी सजूद ॥ १३१[4] ॥

---

१ रहित, अलग। २ सूखै। ३ विश्वास। ४ साखी १३१ मेँ शिष्य गुरु मुसलमानोँ की चार मंज़िलोँ—अर्थात शरीअत (कर्मकांड), तरी(उपासना वा भक्ति), हक़ीक़त (ज्ञान) और मारिफ़त (विज्ञान)—हर के घाट या मुक़ाम का निर्णय करने की प्रार्थना करता है कि कहाँ के धनी दंडवत की जाय। जवाब आगे की साखियोँ मेँ है।

॥ उत्तर ॥

॥ मोजूद मुक़ामे हस्त ॥

नफ़्स ग़ालिब किब्र क़ाबिज़, गुस्सः मनी ऐश ।
दुई दरोग़ हिर्स हुज्जत, नामे नेकी नेस्त ॥ १३२[1] ॥
हैवान आलिम गुमराह ग़ाफ़िल, अव्वल शरीअत पंद ।
हलाल हराम नेकी बदी, दर्स दानिशमंद ॥ १३३[2] ॥

॥ अरवाह मुक़ामे हस्त ॥

इश्क़ इबादत बंदगी, यगानगी इख़लास ।
मेहर मुहब्बत ख़ैर ख़ूबी, नाम नेकी पास ॥ १३४[3] ॥

॥ मावूद मुक़ामे हस्त ॥

यके नूर ख़ूबे ख़ूबाँ दीदनी हैराँ ।
अजब चीज़ ख़ुर्दनी प्याले मस्ताँ ॥ १३५[4] ॥

---

१ सा० १३२—शरीअत के बँधुओं की धुर मंज़िल उन की स्थूल देह ही ("मौजूद") है और उनके लक्षण यह हैं कि मन के वस, अहंकार का रूप, क्रोध अपनपौ और शारीरक सुख के ग़ुलाम, द्वैत भाव झूठ लोभ और हुज्जत तकरार के रसिया, जिन के मन में नेकी या परोपकार नाम मात्र नहीं है। [पं० चं० प्र० के पाठ में "ऐश" की जगह "पस्त" है जो अशुद्ध नहीं कहा जा सकता परन्तु हम को दूसरी लिपि का पाठ अच्छा लगा—दूसरी कड़ी के आख़िर हिस्से का अर्थ पंडित जी का ठीक नहीं है]।

२ सा० १३३—संसारी नर-पशु शरीअत के बँधुए एक तो उसकी शिक्षा को लिये हुए अचेत भटकते हैं और दूसरे हलाल हराम नेकी बदी के जाल में जो विद्या बुद्धि वालों ने बिछा रक्खा है फस रहे हैं।

३ सा० १३४—तरीक़त वालों की धुर मंज़िल उन की आत्मा ("अरवाह") है और उनका मार्ग प्रेमा-भक्ति, भजन सुमिरन, एक ही मालिक में निश्चय, और हर एक के साथ दया प्यार भलाई हमदर्दी और नेकी का है।

४ सा० १३५—हक़ीक़त वालों का इष्ट उन का परमेश्वर ("मावूद") है जो ख़बों में ख़ूब और तेज का ऐसा पुंज है जिस को देख कर आँखें चकरा और झप जाती हैं और जो मस्तों अर्थात प्रेम नशे में चूर भक्तों के प्याले की अचरजी अमी रूप दारू है।

कुल्ल फ़ारिग़ तर्क दुनियाँ, हर रोज़ हरदम याद ।
अल्लह आले इश्क़ आशिक़, दरूने फ़रियाद ॥ १३६[१] ॥
आब आतश अर्श कुरसी, सूरते सुबहान ।
सिर्र सिफ़त कर्दः बूदन, मारिफ़त मकान ॥ १३७[२] ॥
हक्क़ हासिल नूर दीदम, क़रारे मक़सूद ।
दीदारे यार अरवाह आमद, मौजूदे मौजूद ॥ १३८[३] ॥
चहार मंजिल बयाँ गुफ़तम, दस्त करदः बूद ।
पीराँ मुरीदाँ ख़बर करदः, राहे माबूद ॥ १३९[४] ॥
पहिली प्राण पसू नर कीजै, साच झूठ संसार ।
नीत अनीत भला बुरा, सुभ असुभ निरधार ॥ १४० ॥
सब तजि देखि बिचारि करि, मेरा नाहीं कोइ ।
अन दिन राता राम सौं, भाव भगति रस होइ ॥१४१॥
अंबर धरती सूर ससि, साईं सबले[५] लावै अंग ।
जस कीरति करुना करै, तन मन लागा रंग ॥ १४२ ॥

---

१ सा० १३६—मारिफ़त वाले वह प्रेमी हैं जो संसार को त्याग कर सब प्रकार से संतुष्ट हैं, जिन को अपने प्रीतम का निरंतर ध्यान लगा है और विरह और प्रेम की अंतर में पुकार उठ रही है।

२ सा० १३७—पानी, आग, आठवाँ आसमान (कुरसी) और नवाँ आसमान (अर्श) जहाँ मालिक का तख़्त है वह उसी का ज़हूरा है—जो मारिफ़त (विज्ञान) की मंज़िल पर पहुँचे वह उस के भेद (सिर्र) की महिमा जानते हैं। [इस साखी के अर्थ में पं० चं० प्र० ने बिल्कुल भूल की है—दूसरी कड़ी में सिर्र=भेद की जगह शरर=चिनगारी लिखा है, और अर्श और कुरसी के मानी भी ठीक नहीं दिये गये हैं]।

३ सा० १३८—आख़िर में मैं ने ज़िन्दगी का माहसल (वांछितफल) पाया अर्थात उस परम तत्व का प्रकाश प्रीतम के दर्शन में लख पड़ा जो कि हस्ती की हस्ती और जान की जान है।

४ साखी १३९—मैं ने चारों मंज़िलों का भेद बता दिया, जैसा कि सतगुरु ने अपने शिष्यों को उपदेश किया है उस की कमाई करनी चाहिये।

५ पूरा पूरा।

परम तेज तहँ मन गया, नैनहुँ देख्या आइ ।
सुख संतोष पाया घणा, जोतिहिँ जोति समाइ ॥१४३॥
अरथ चारि अस्थान का, गुरु सिष कह्या समझाइ ।
मारग सिरजनहार का, भाग बड़े सो जाइ ॥ १४४ ॥
अरवाह सिजदा कुनंद, औजूद रा चि कार । (३–७०)
दादू नूर दादनी, आशिक़ाँ दीदार ॥ १४५ ॥
आशिक़ाँ रह क़ब्ज़ कर्द:, दिलो जाँ रफ़्तंद ॥ (३–६६)
अलह आले नूर दीदम, दिले दादू बंद ॥ १४६ ॥
आशिक़ाँ मस्ताने आलम, खुरदनी दीदार ।
चंद दिह चे कार दादू, यारे मा दिलदार ॥ १४७[1] ॥

॥ साक्षातकार ॥

दादू दया दयाल की, सो क्योँ छानी[2] होइ ।
प्रेम पुलक[3] मुलकत[4] रहै, सदा सुहागिनि सोइ ॥१४८॥
बिगसि बिगसि दरसन करै, पुलकि पुलकि रस पान ।
मगन गलित माता रहै, अरस परस मिलि प्रान ॥ १४९ ॥
[दादू] देखि देखि सुमिरन करै, देखि देखि लै लीन ।
देखि देखि तन मन बिलै[5], देखि देखि चित दीन ॥१५०॥
निरखि निरखि निज नाँव ले, निरखि निरखि रस पीव ।
निरखि निरखि पिव कौं मिलै, निरखि निरखि सुख जीव ॥ १५१ ॥

---

१ साखी १४७—प्रेमी जन संसारी ऐश्वर्य को तुच्छ समझते हैँ, उनकी प्रीत अपने प्रीतम से लगी है और उसी के दर्श अमी रस के आनन्द मेँ संतुष्ट और मतवाले यानी दुनिया से बेख़बर रहते हैँ। "दिह" का अर्थ फ़ारसी मेँ गाँव यानी जायदाद है, पं० चं० प्र० की पुस्तक मेँ "रह" दिया है जो अशुद्ध जान पड़ता है। २ गुप्त, ढकी हुई। ३ प्रफुल्लित, मगन। ४ मुसकराती। ५ बिलाय जाय, लय हो जाय।

॥ आतम सुमिरण ॥

तन सौँ सुमिरण सब करै, आतम सुमिरण एक ।
आतम आगैँ एक रस, दादू बड़ा बिबेक ॥ १५२ ॥
[दादू] माटी के मोकाम का, सब को जानै जाप ।
एक आध अरवाह का, बिरला आपै आप ॥ १५३ ॥
[दादू] जब लगि असथल देह का, तब लगि सब व्यापै ।
निर्भै असथल आतमा, आगैँ रस आपै ॥ १५४ ॥
जब नहिँ सुरत सरीर की, बिसरै सब संसार ।
आतम न जाणै आप कौँ, तब एक रह्या निर्धार ॥१५५॥
तन सौँ सुमिरण कीजिये, जब लगि तर नीका[1] ।
आतम सुमिरण ऊपजै, तब लागै फीका ।
(आगैँ आपैँ आप है, तहाँ क्या जीव का) ॥ १५६ ॥

॥ आतम दृष्टि ॥

चर्म दृष्टि देखै बहुत, आतम दृष्टी एकि ।
ब्रह्म दृष्टि परिचय भया, तब दादू बैठा देखि ॥ १५७ ॥
येई नैनाँ देह के, येई आतम होइ ।
येई नैनाँ ब्रह्म के, दादू पलटे दोइ ॥ १५८ ॥
घट परिचै सब घट लखै, प्राण परीचै प्राण ।
ब्रह्म परीचै पाइये, दादू है हैरान ॥ १५९ ॥

॥ अंतरी अराधना ॥

दादू जल पाषाण ज्यूँ, सेवै सब संसार ।
दादू पाणी लूण[2] ज्यूँ, कोइ बिरला पूजनहार ॥ १६० ॥
अलख नाँव अंतरि कहै, सब घटि हरि हरि होइ ।
दादू पाणी लूण ज्यूँ, नाँव कहीजै सोइ ॥ १६१ ॥

---

१ जब तक शरीर में लाग है अर्थात तन-अभिमान है । २ नोन ।

ाड़ै सुरति सरीर कूँ, तेज पुंज मैं आइ ।
ादू ऐसैं मिलि रहै, ज्यूँ जल जलहि समाइ ॥ १६२ ॥
रति रूप सरीर का, पिव के परसैं होइ ।
ादू तन मन एक रस, सुमिरण कहिये सोइ ॥ १६३ ॥
ाम हकत रामहि रह्या, आप बिसर्जन होइ ।
ान पवना पंचौं बिलै,[1] दादू सुमिरण सोइ ॥ १६४ ॥
ाहँ आतम राम सँभालिये, तहँ दूजा नाहीं और ।
ाहो आगैं अगम है, दादू सूषिम ठौर ॥ १६५ ॥
ार आतम सौं आतमा, ज्यौं पाणी मैं लूँण ।
ादू तन मन एक रस, तब दूजा कहिये कूँण ॥ १६६ ॥
ान मन बिलै यौं कीजिये, ज्यौं पाणी मैं लूँण ।
ीव ब्रह्म एकै भया, तब दूजा कहिये कूँण ॥ १६७ ॥
ान मन बिलै यौं कीजिये, ज्यौं घृत लागे घाम ।
आतम कमल तहँ बंदगी, जहँ दादू परगट राम ॥ १६८ ॥

॥ अंतरी सुमिरण ॥

कोमल कमल तहँ पैसि करि, जहाँ न देखै कोइ ।
मन थिर सुमिरण कीजिये, तब दादू दरसन होइ ॥ १६९ ॥
नख सिख सब सुमिरण करै, ऐसा कहिये जाप ।
अंतरि बिगसै आतमा, तब दादू प्रगटै आप ॥ १७० ॥
अंतरगति हरि हरि करै, तब मुख की हाजत नाहिं ।
सहजैं धुनि लागी रहै, दादू मन हीं माहिं ॥ १७१ ॥
[दादू] सहजैं सुमिरण होत है, रोम रोम रमि राम ।
चित्त चहूँट्या[2] चित्त सौं, यौं लीजै हरि नाम ॥ १७२ ॥

---

[1] बिलाय जाय, लय हो जाय । [2] चिपका ।

दादू सुमिरण सहज का, दीन्हा आप अनंत ।
अरस परस उस एक सौं, खेलै सदा बसंत ॥ १७३ ॥

[दादू] सबद अनाहद हम सुन्या, नख सिख सकल सरीर
सब घटि हरि हरि होत है, सहजैं ही मन थीर ॥ १७४

हुण दिल लागा हिक सौं, मे कूँ एहा तास ।
दादू कंमि खुदाय दे, बैठा डीहैं रासि ॥ १७५[1] ॥

[दादू] माला सब आकार की, कोइ साधू सुमिरै राम
करणीगर[2] तैं क्या किया, ऐसा तेरा नाम ॥ १७६ ॥

सब घट मुख रसना करै, रटै राम का नाँव ।
दादू पीवै राम रस, अगम अगोचर ठाँव ॥ १७७ ॥

[दादू] मन चित इस्थिर कीजिये, तौ नख सिख सुमिरण होइ
स्रवन नेत्र मुख नासिका, पंचौं पूरे सोइ ॥ १७८ ॥

॥ साध महिमा ॥

आतम आसण राम का, तहाँ बसै भगवान ।
दादू दून्यूँ परसपर, हरि आतम का थान ॥ १७९ ॥

राम जपै रुचि साध कौं, साध जपै रुचि राम ।
दादू दून्यूँ एकटग,[3] यहु आरँभ यहु काम ॥ १८० ॥

जहाँ राम तहँ संत जन, जहँ साधू तहँ राम ।
दादू दून्यूँ एकठे,[4] अरस परस बिसराम ॥ १८१ ॥

[दादू] हरि साधू यौं पाइये, अविगत के आराध ।
साधू संगति हरि मिलैं, हरि संगत थैं साध ॥ १८२ ॥

---

१ मेरा दिल एक के साथ लग गया और इसी की फ़िकर है, दादू मालि की सेवा मैं रात दिन बैठा रहता है। २ क़ुदरत का रचनहार, करतार। ३ ए तार। ४ इकट्ठे।

[दादू] राम नाम सौं मिलि रहै, मन के छाडि बिकार।
तौ दिल ही माहैं देखिये, दून्यूँ का दीदार ॥ १८३ ॥

साध समाणा राम मैं, राम रह्या भरपूरि।
दादू दून्यूँ एक रस, क्यौंकरि कीजे दूरि ॥ १८४ ॥

[दादू] सेवग साईं का भया, तब सेवग का सब कोइ।
सेवग साईं कौं मिल्या, तब साईं सरिखा होइ ॥ १८५ ॥

॥ सतसंग महिमा ॥

मिसरी माहैं मेलि करि, मोल बिकाना बंस[1]।
यौं दादू महिंगा भया, पारब्रह्म मिलि हंस ॥ १८६ ॥

मीठे माहैं राखिये, सो काहे न मीठा होइ।
दादू मीठा हाथि ले, रस पीवै सब कोइ ॥ १८७ ॥

॥ सतसंगति कुसंगति ॥

मीठे सौं मीठा भया, खारे सौं खारा।
दादू ऐसा जीव है, यहु रंग हमारा ॥ १८८ ॥

मीठे मीठे करि लिये, मीठा माहैं बाहि।
दादू मीठा ह्वै रह्या, मीठे माहिं समाइ ॥ १८९ ॥

राम बिना किस काम का, नहिं कौड़ी का जीव।
साईं सरिखा ह्वै गया, दादू परसैं पीव ॥ १९० ॥

॥ पारख अपारख ॥

हीरा कौड़ी ना लहै, मूरखि हाथ गँवार।
पाया पारिख जौहरी, दादू मोल अपार ॥ १९१ ॥

अंधे हीरा परखिया, कीया कौड़ी तोल।
दादू साधू जौहरी, हीरे मोल न तोल ॥ १९२ ॥

---

१ बाँस का पनच जो मिसरी के कुज्जे पर लगा रहता है।

मीराँ कीया मेहर सौं, परदे थैं लापर्द[1] ।
राखि लिया दीदार मैं, दादू भूला दर्द ॥ १९३ ॥
[दादू] नैन बिन देखिबा, अंग बिन पेखिबा,
रसन बिन बोलिबा, ब्रह्म सेती ।
स्रवन बिन सुणिबा, चरण बिन चालिबा,
चित्त बिन चित्यबा, सहज एती ॥ १९४ ॥

॥ पतिव्रत ॥

दादू देख्या एक मन, सो मन सब ही माहिँ ।
तेहि मन सौं मन मानिया, दूजा भावै नाहिँ ॥ १९५ ॥
[दादू] जेहिँ घट दीपक राम का, तेहिँ घट तिमिर न होइ ।
उस उजियारे जोति के, सब जग देखै सोइ ॥ १९६ ॥
दादू दिल अरवाह का, सो अपणा ईमान ।
सोई स्याबति[2] राखिये, जहँ देखै रहमान ॥ १९७ ॥
अल्लह आप इमान है, दादू के दिल माहिँ ।
सोई स्याबति राखिये, दूजा कोई नाहिँ ॥ १९८ ॥

॥ अनुभव ॥

प्राण पवन ज्यौं पातला, काया करै कमाइ ।
दादू सब संसार मैं, क्यौं ही गह्या न जाइ ॥ १९९ ॥
नूर तेज ज्यौं जोति है, प्राण प्यंड[3] यौं होइ ।
दिष्टि मुष्टि[4] आवै नहीं, साहिब के बसि सोइ ॥ २००
काया सूषिम करि मिलै, ऐसा कोई एक ।
दादू आतम ले मिलैं, ऐसे बहुत अनेक ॥ २०१[5] ॥

---

१ वेपरदा । २ साबित, सावधान । ३ पिंड । ४ जिस को इन स्थूल इंद्रियों देख या छू नहीं सकते । ५ काया को ऊपर लिखी रीति से सूक्ष्म करके मि लाला कोई बिरला है परंतु काया के पात होने पर मिलने वाले बहुत हैं ।

आड़ा आतम तन धरै, आप रहै ता माहिं[1] ।
आपण खेलै आप सौं, जीवन सेती नाहिं ॥ २०२ ॥

[दादू] अनभै थैं आनँद भया, पाया निर्भय नाँव ।
निह्चल निर्मल निर्बाण पद, अगम अगोचर ठाँव ॥२०३॥

दादू अनभै बाणी अगम कौं, लेगइ संग लगाइ ।
अगह गहै अकहै कहै, अभेद भेद लहाइ ॥ २०४ ॥

जे कुछ बेद पुरान थैं, अगम अगोचर बात ।
सो अनभै साचा कहै, यहु दादू अकह कहात ॥ २०५ ॥

[दादू] जब घटि अनभै ऊपजै, तब किया करम का नास ।
भय भरम भागै सबै, पूरन ब्रह्म प्रकास ॥ २०६ ॥

[दादू] अनभै काटै रोग कौं, अनहद उपजै आइ ।
सेझे[2] का जल निर्मला, पीवै रुचि ल्यौ लाइ ॥ २०७ ॥

दादू बाणी ब्रह्म की, अनभै घट परकास ।
राम अकेला रहि गया, सबद निरंजन पास ॥ २०८ ॥

जे कबहूँ समझै आतमा, तौ दिढ़ गहि राखै मूल ।
दादू सेझा राम रस, अंमृत काया कूल[3] ॥ २०९ ॥

[दादू] मुझ ही माहैं मैं रहूँ, मैं मेरा घरबार ।
मुझ ही माहैं मैं बसूँ, आप कहै करतार ॥ २१० ॥

[दादू] मैं ही मेरा अरस[4] मैं, मैं ही मेरा थान ।
मैं ही मेरी ठौर मैं, आप कहै रहमान ॥ २११ ॥

---

१ तन के सामने (आड़े) आतमा को रक्खै अर्थात तन की सुधि बिसरादे और आप अतमा ही मैं रत हो रहै । २ सोत पोत । ३ राम रस तो सोत पोत अथवा झरना के समान है और काया कूल अर्थात नदी नाले के समान जिस मैं वह अमृत वहता है । ४ अर्श=नवाँ आसमान ।

[दादू] मैं ही मेरे आसरे, मैं मेरे आधार ।
मेरे तकिये मैं रहूँ, कहै सिरजनहार ॥ २१२ ॥

[दादू] मैं ही मेरी जाति मैं, मैं ही मेरा अंग ।
मैं ही मेरा जीव मैं, आप कहै परसंग ॥ २१३ ॥

[दादू] सबै दिसा सो सारिखा[1] , सबै दिसा मुख बैन ।
सबै दिसा स्रवणहुँ सुणै, सबै दिसा कर नैन ॥ २१४ ॥

सबै दिसा पग सीस है, सबै दिसा मन चैन ।
सबै दिसा सनमुख रहै, सबै दिसा अँग ऐन ॥ २१५ ॥

बिन स्रवण हुँ सब कुछ सुणै, बिन नैनहुँ सब देखै ।
बिन रसना मुख सब कुछ बोलै, यहु दादू अचरज पेखै ॥२१६

सब अँग सब ही ठौर सब, सबँगी सब सार ।
कहै गहै देखै सुनै, दादू सब दीदार ॥ २१७ ॥

कहै सब ठौर गहै सब ठौर, रहै सब ठौर जोति परवानै
नैन सब ठौर बैन सब ठौर, ऐन सब ठौर सोई भल जानै ॥
सीस सब ठौर स्रवन सब ठौर, चरन सब ठौर कोई यहु मानै
अंग सब ठौर संग सब ठौर, सबै सब ठौर दादू ध्यानै ॥२१८

तेज ही कहणा तेज ही गहणा, तेज ही रहणा सारे ॥
तेज ही बैना तेज ही नैना, तेज ही ऐन हमारे ॥
तेज ही मेला तेज ही खेला, तेज अकेला तेज ही तेज सँवारे
तेज ही लेवै तेज ही देवै, तेज ही खेवै तेज ही दादू तारे ॥२१९॥

नूरहि का घर नूरहि का घर, नूरहि का बर[2] मेरा ।
नूरहि मेला नूरहि खेला, नूर अकेला नूरहि माँझ बसेरा ॥

---

१ सब दिशा उस के लिये बराबर हैं। २ पति।

नूरहि का अँग नूरहि का सँग, नूरहि का रँग नेरा[1] ।
नूरहि राता नूरहि माता, नूरहि खाता दादू तेरा ॥२२०॥

॥ पिंडी (खाकी) और ब्रह्मांडी (नूरी) मन ॥

[दादू] नूरी दिल अरवाह का, तहाँ बसै माबूदं ।
तहँ बंदे की बंदगी, जहाँ रहै मौजूदं ॥ २२१ ॥
[दादू] नूरी दिल अरवाह का, तहँ खालिक भरपूरं ।
आले नूर अलाह का, खिदमतगार हजूरं ॥ २२२ ॥
[दादू] नूरी दिल अरवाह का, तहँ देख्या करतारं ।
तहँ सेवग सेवा करै, अनंत कला रवि सारं ॥ २२३ ॥
[दादू] नूरी दिल अरवाह का, तहाँ निरंजन बासं ।
तहँ जन तेरा एक पग, तेज पुंज परकासं ॥ २२४ ॥
[दादू] तेज कँवल दिल नूर का, तहाँ राम रहमानं[2] ।
तहँ करि सेवा बंदगी, जे तूँ चतुर सयानं ॥ २२५ ॥
तहाँ हजूरी बंदगी, नूरी दिल मैं होइ ।
तहँ दादू सिजदा करै, जहाँ न देखै कोइ ॥ २२६ ॥
[दादू] देही माहैं दोइ दिल, इक खाकी इक नूर ।
खाकी दिल सूझै नहीं, नूरी मंझि हजूर ॥ २२७ ॥

॥ नमाज़ सिजदा ॥

[दादू] हौद[3] हजूरी दिल ही भीतर, गुस्ल[4] हमारा सारं ।
उजू[5] साजि अलह के आगै, तहाँ निमाज गुजारं ॥ २२८ ॥
[दादू] काया मसीत[6] करि पंचजमाती[7], मनही मुला इमामं ।
आप अलेख इलाही आगै, तहँ सिजदा करै सलामं ॥२२९॥

---

१ "नेरा" = पास, निकट । पं०चं० प्र० के पाठ में "मेरा" है । २ दयाल । ३ हौज़ = कुंड । ४ स्नान । ५ वज़ू मुसलमानों में नमाज़ पढ़ने के लिये करते हैं जिसमें पहले तो पानी से दोनों हाथों को धोते हैं, फिर कुल्ली करते हैं फिर पेशानी (माथा) पूरा चिहरा बाँह और आख़िर में पाँव को धोते हैं । ६ मस्जिद । ७ पाँच फ़िर्क़े मुसलमानों के ।

[दादू] सब तन तसबी[1] कहै करीमं, ऐसा कर ले जापं
रोज़ा एक दूर करि दूजा, कलमा आपै आपं ॥ २३० ॥
[दादू] अठे पहर अलह के आगे, इक टग रहिबा ध्यानं
आपै आप अरस के ऊपर, जहाँ रहै रहमानं ॥ २३१ ॥
अठे पहर इबादती, जीवन मरण निबाहि ।
साहिब दर सेवै खड़ा, दादू छाड़ि न जाइ ॥ २३२ ॥

॥ साध महिमा ॥

अठे पहर अरस मैं, ऊभो ई आहे ।
दादू पसे तिन खे अला, गाल्हाये ॥ २३३[2] ॥
अठे पहर अरस मैं, बेठा पिरी पसन्नि ।
दादू पसे तिन खे, जे दीदार लहन्नि ॥ २३४[3] ॥
अठे पहर अरस मैं, जिन्हीं रूह रहन्नि ।
दादू पसे तिन खे, गुझ्यूँ गाल्ही कन्नि ॥ २३५[4] ॥
अठे पहर अरस मैं, लुडींदा आहिन ।
दादू पसे तिन खे, असां खबरि डिन्ह ॥ २३६[5] ॥
अठे पहर अरस मैं, वंजी जे गाहिन ।
दादू पसे तिनखे, किते ई आहिन ॥ २३७[6] ॥

---

१ सुमिरनी ।

२ साखी २३३—अल्लाह आठ पहर नवें आसमान (अर्श) मैं खड़ा हो है, जो उस को देखते हैं सो उस से बात चीत करते हैं ।

३ सा० २३४—प्रीतम (पिरी) आठ पहर अर्श म बैठा देखता है, जो उस को देखते हैं उन को दर्शन मिलते हैं ।

४ सा० २३५—जिन की सुरति आठ पहर अर्श मैं रहती है वह उस को देखते है और उस से गुप्त बात चीत करते है ।

५ सा० २३६—जो आठ पहर अर्श मैं झूल रहे हैं वह उस को देखते हैं और हम को ख़बर देते हैं ।

६ सा० २३७—जो आठ पहर अर्श मैं जाकर रहते हैं जो उस को देखते हैं वह कितने (कहाँ ?) हैं ।

॥ प्रेम पियाला ॥

प्रेम पियाला नूर का, आसिक भरि दीया ।
दादू दर दीदार मैं, मतवाला कीया ॥ २३८ ॥
इसक सलोना आसिकाँ, दरगह थैं दीया ।
दर्द मोहब्बत प्रेम रस, प्याला भरि पीया ॥ २३९ ॥
दादू दिल दीदार दे, मतवाला कीया ।
जहँ अरस इलाही आप था, अपना करि लीया ॥२४०॥
दादू प्याला नूर दा, आसिक अरस पिवन्नि ।
अठे पहर अल्लाह दा, मुँह दिट्ठे जीवन्नि ॥ २४१ ॥
आसिक अमली साध सब, अलख दरीबे जाइ ।
साहिब दर दीदार मैं, सब मिलि बैठे आइ ॥ २४२ ॥
राते माते प्रेम रस, भरि भरि देइ खुदाइ ।
मस्तान मालिक करि लिये, दादू रहे ल्यौ लाइ ॥२४३॥

॥ अथाह भक्ति ॥

[दादू] भगति निरंजन राम की, अविचल अविनासी ।
सदा सजीवन आतमा, सहजैं परकासी ॥ २४४ ॥
[दादू] जैसा राम अपार है, तैसी भगति अगाध ।
इन दून्यूँ की मित[1] नहीं, सकल पुकारैं साध ॥ २४५ ॥
[दादू] जैसा अविगत राम है, तैसी भगति अलेख ।
इन दून्यूँ की मित नहीं, सहस मुखाँ कहै सेस ॥ २४६ ॥
[दादू] जैसा निर्गुण राम है, तैसी भगति निरंजन जाणि ।
इन दून्यूँ की मित नहीं, संत कहैं परवाणि[2] ॥ २४७ ॥
[दादू] जैसा पूरा राम है, तैसी पूरण भगति समान ।
इन दून्यूँ की मित नहीं, दादू नाहीं आन ॥ २४८ ॥

---

१ हद, अंदाज़ा । २ प्रमाण ।

॥ निरंतर सेवा ॥

दादू जब लग राम है, तब लग सेवग होइ ।
अखंडित सेवा एक रस, दादू सेवग सोइ ॥ २४९ ॥

दादू जैसा राम है, तैसी सेवा जाणि ।
पावैगा तब करैगा, दादू सो परवाणि ॥ २५० ॥

[दादू] साईं सरीखा सुमिरन कीजे, साईं सरीखा गावै ।
साईं सरीखी सेवा कीजे, तब सेवग सुख पावै ॥२५१॥

[दादू] सेवग सेवा करि डरै, हम थैं कछू न होइ ।
तूँ है तैस बंदगी, करि नहिँ जाणै कोइ ॥ २५२ ॥

[दादू] जे साहिब मानै नहीं, तऊ न छाडौं सेव ।
यहि अवलंबनि[1] जीजिये, साहिब अलख अभेव ॥ २५३ ॥

आदि अंत आगे रहै, एक अनूपम देव ।
निराकार निज निर्मला, कोई न जाणै भेव ॥ २५४ ॥

अबिनासी अपरंपरा, वार पार नहिँ छेव[2] ।
सो तूँ दादू देखि ले, उर अंतरि करि सेव ॥ २५५ ॥

दादू भीतरि पैसि करि, घट के जड़े कपाट ।
साईं की सेवा करै, दादू अविगत घाट ॥ २५६ ॥

घट परिचय सेवा करै, प्रत्तषि[3] देखै देव ।
अविनासी दर्सन करै, दादू पूरी सेव ॥ २५७ ॥

पूजणहारे पासि है, देही माहैं देव ।
दादू ता कौं छाडि करि, बाहरि माँडी सेव ॥ २५८ ॥

---

१ आसरा, आधार । २ अंत । ३ प्रत्यक्ष ।

॥ परचय ॥

दादू रमता राम सौं, खेलै अंतर माहिं ।
उलटि समाना आप मैं, सो सुख कतहूँ नाहिं ॥ २५९
[दादू] जे जन बेधे प्रीत सौं, सो जन सदा सजीव ।
उलटि समाने आप मैं, अंतर नाहीं पीव[1] ॥ २६० ॥
परघट खेलै पीव सौं, अगम अगोचर ठाँव ।
एक पलक का देखणा, जिवन मरण का नाँव ॥ २६१ ॥
आतम माहैं राम है, पूजा ता की होइ ।
सेवा बंदन आरती, साध करैं सब कोइ ॥ २६२ ॥
परचइ सेवा आरती, परचइ भोग लगाइ ।
दादू उस परसाद की, महिमा कही न जाइ ॥ २६३ ॥
माहिं निरंजन देव है, माहैं सेवा होइ ।
माहिं उतारै आरती, दादू सेवग सोइ ॥ २६४ ॥
[दादू] माहैं कीजे आरती, माहैं पूजा होइ ।
माहैं सतगुरु सेविये, बूझै बिरला कोइ ॥ २६५ ॥
संत उतारैं आरती, तन मन मंगलचार ।
दादू बलि बलि वारणै[2], तुम पर सिरजनहार ॥ २६६
दादू अबिचल आरती, जुग जुग देव अनंत ।
सदा अखंडित एक रस, सकल उतारैं संत ॥ २६७ ॥

॥ सौंज ॥

सति राम आतमा वैश्नो, सुबुधि भोमि संतोष थान ।
मूल मंत्र मन माला, गुर तिलक सति संजम ॥
सील सुचया ध्यान धोवती, काया कलस प्रेम जल ।
मनसा मंदिर निरंजन देव, आतमा पाती पुहुप प्रीति

---

१ अंतर=परदा—प्रीतम से फ़र्क़ या पर्दा नहीं रह गया । २ बलिहारी ।

चेतना चंदन नवधा नाँव, भाव पूजा मति पात्र ।
सहज समर्पण सबद घंटा, आनंद आरती दया प्रसाद ॥
अनिनि[1] एक दसा तीरथ सतसंग, दान उपदेस ब्रत सुमिरन ।
खट गुन ज्ञान अजपा जाप, अनभै आचार मरजादा राम ॥
फल दरसन अभिअंतरि, सदा निरंतर सति सौंज[2] दादू वर्तते ।
आतमा उपदेस, अंतरगति पूजा ॥ २६८ ॥
पिव सौं खेलौं प्रेम रस, तौ जियरे जक[3] होइ ।
दादू पावै सेज सुख, पड़दा नाहीं कोइ ॥ २६९ ॥
सेवग बिसरै आप कौं, सेवा बिसरि न जाइ ।
दादू पूछै राम कौं, सो तत कहि समझाइ ॥ २७० ॥
ज्यौं रसिया रस पीवताँ, आपा भूलै और ।
यौं दादू रहि गया एक रस, पीवत पीवत ठौर ॥ २७१ ॥
जहँ सेवग तहँ साहिब बैठा, सेवग सेवा माहिं ।
दादू साईं सब करै, कोई जाणै नाहिं ॥ २७२ ॥
[दादू] सेवग साईं बस किया, सौंप्या सब परिवार ।
तब साहिब सेवा करै, सेवग के दरबार ॥ २७३ ॥
तेज पुंज को बिलसणा, मिलि खेलै इक ठाँव ।
भरि भरि पीवै राम रस, सेवा इस का नाँव ॥ २७४ ॥
अरस परस मिलि खेलिये, तब सुख आनँद होइ ।
तन मन मंगल चहुँ दिसि भये, दादू देखै सोइ ॥ २७५ ॥

॥ सुहाग ॥

मस्तक मेरे पाँव धरि, मंदिर माहैं आव ।
सइयाँ सोवै सेज पर, दादू चंपै पाँव ॥ २७६ ॥

---

१ "अनन्य" अर्थात केवल एक जिस में दूसरे की गुंजाइश न हो । २ आचार
३ चैन, इतमीनान ।

ये चारिउँ पद पलँग के, साईं के सुख सेज ।
दादू इन पर बैसि करि, साईं सेती हेज[1] ॥ २७७ ॥
प्रेम लहरि की पालकी, आतम बैसे आइ ।
दादू खेलै पीव सौं, यहु सुख कह्या न जाइ ॥ २(

॥ सौंज ॥

[दादू] देव निरंजन पूजिये, पाती पंच चढ़ाइ ।
तन मन चंदन चर्चिये, सेवा सुरति लगाइ ॥ २७
भगति भगति सब को कहै, भगति न जाणै कोइ
दादू भगति भगवंत की, देह निरंतर होइ ॥ २८० ॥
देही माहैं देव है, सब गुण थैं न्यारा ।
सकल निरंतर भरि रह्या, दादू का प्यारा ॥ २८१ ॥
जीव पियारे राम कौं, पाती पंच चढ़ाइ ।
तन मन मनसा सौंपि सब, दादू बिलम[2] न लाइ ॥ २८२ ॥

॥ ध्यान ॥

सबद सुरति ले साजि चित, तन मन मनसा माहिं ।
मति बुधि पंचौं आतमा, दादू अनत न जाहिं ॥ २८३ ।
[दादू] तन मन पवना पंच गहि, ले राखै निज ठौर ।
जहाँ अकेला आप है, दूजा नाहीं और ॥ २८४ ॥
[दादू] यहु मन सुरति समेट करि, पंचअपूठे आणि[3] ।
निकट निरंजन लागि रहु, संगि सनेही जाणि ॥ २८५ ॥
मन चित मनसा आतमा, सहज सुरति ता माहिं ।
दादू पंचौं पूरि ले, जहँ धरती अंबर नाहिं ॥ २८६ ॥
दादू भीगे प्रेम रस, मन पंचौं का साथ ।
मगन भये रस मैं रहे, तब सनमुख त्रिभुवन नाथ ॥२८७॥

---

१ हेत । २ देर । ३ मन और सुरति को समेट कर पंच इंद्रियों को पीछे (अपूठे) डाल दो ।

[दादू] सबदैं सबद समाइ ले, पर आतम सैं प्राण ।
यहु मन मन सैं बाँधि ले, चित्तैं चित्त सुजाण ॥ २८८ ॥

[दादू] सहजैं सहज समाइ ले, ज्ञानै बंध्या ज्ञान ।
सुत्रैं[1] सुत्र समाइ ले, ध्यानैं बंध्या ध्यान ॥ २८९ ॥

[दादू] दृष्टैं दृष्टि समाइ ले, सुरतैं सुरति समाइ ।
समझैं समझि समाई ले, लै सैं लै ले लाइ ॥ २९० ॥

[दादू] भावैं भाव समाइ ले, भगतैं भगति समान ।
प्रेमैं प्रेम समाइ ले, प्रीतैं प्रीति रस पान ॥ २९१ ॥

[दादू] सुरतैं सुरति समाइ रहु, अरु बैनहुं सैं बैन ।
मन ही सैं मन लाइ रहु, अरु नैनहुँ सैं नैन ॥ २९२ ॥

जहाँ राम तहँ मन गया, मन तहँ नैना जाइ ।
जहँ नैना तहँ आतमा, दादू सहजि समाइ ॥ २९३ ॥

॥ जीवन मुक्ति ॥

प्राण न खेलै प्राण सैं, मन ना खेलै मन ।
सबद न खेलै सबद सैं, दादू राम रतन ॥ २९४ ॥

चित्त न खेलै चित्त सैं, बैन न खेलै बैन ।
नैन न खेलै नैन सैं, दादू परघट ऐन ॥ २९५ ॥

पाक न खेलै पाक सैं, सार न खेलै सार ।
खूब न खेलै खूब सैं, दादू अंग अपार ॥ २९६ ॥

नूर न खेलै नूर सैं, तेज न खेलै तेज ।
जोति न खेलै जोति सैं, दादू एकै सेज[2] ॥ २९७ ॥

[दादू] पंच पदारथ मन रतन, पवणा माणिक होइ ।
आतम हीरा सुरति सैं, मनसा मोती पोइ ॥ २९८ ॥

---

१ श्रोत्र = कान । २ पलँग ।

अजब अनूपं हार है, साईं सरिखा सोइ ।
दादू आतम राम गलि[1] , जहाँ न देखै कोइ ॥ २९९ ॥
[दादू] पंचौं संगी संगि ले, आये आकासा ।
आसण अमर अलेख का, निर्गुण नित बासा ॥ ३०० ॥
प्राण पवन मन मगन ह्वै, सँगि सदा निवासा ।
परचा परम दयाल सौं, सहजैं सुख दासा ॥ ३०१ ॥
[दादू] प्राण पवन मन मणि बसै, त्रिकुटी केरे संधि ।
पंचौं इंद्री पीव सौं, ले चरणौं बंधि ॥ ३०२ ॥
प्राण हमारा पीव सौं, यौं लागा सहिये ।
पुहप बास घृत दूध में, अब का सौं कहिये ॥ ३०३ ॥
पाहन लोह बिचि बासदेव, ऐसैं मिलि रहिये ।
दादू दीनदयाल सौं, संगहि सुख लहिये ॥ ३०४ ॥
[दादू] ऐसा बड़ा अगाध है, सूषिम जैसा अंग ।
पुहप बास थैं पातला, सो सदा हमारे संग ॥ ३०५ ॥
[दादू] जब दिल मिला दयाल सौं, तब अन्तर कुछ नाहिं ।
ज्यौं पाला पाणी कौं मिल्या, त्यौं हरि जन हरि माहिं ॥ ३०६॥
[दादू] जब दिल मिला दयाल सौं, तब सब पड़दा दूरि ।
ऐसै मिलि एकै भया, बहु दीपक पावक पूरि ॥ ३०७ ॥
[दादू] जब दिल मिला दयाल सौं, तब अंतर नाहीं रेख ।
नाना बिधि बहु भूषणाँ, कनक कसौटी एक ॥ ३०८ ॥
[दादू] जब दिल मिला दयाल सौं, तब पलक न पड़दा कोइ ।
डाल मूल फल बीज में, सब मिलि एकै होइ ॥ ३०९ ॥
फल पाका बेली तजी, छिटकाया मुख माहिं ।
साईं अपणा करि लिया, सो फिरि ऊगै नाहिं ॥ ३१० ॥

---

[1] गले म ।

[दादू] काया कटोरा दूध मन, प्रेम प्रीति सौं पाइ।
हरि साहिब यहि विधि अंचवै, वेगा बार न लाइ ॥३११॥
टगा टगी[1] जीवण मरण, ब्रह्म बराबरि होइ।
परघट खेलै पीव सौं, दादू बिरला कोइ ॥ ३१२ ॥

॥ प्रेम प्याला ॥

दादू निवारा[2] ना रहै, ब्रह्म सरीखा होइ।
लै समाधि रस पीजिये, दादू जब लगि दोइ ॥ ३१३ ॥
बेखुद खबर हुशियार बाशद, खुद खबर पामाल।
बेक़ीमती मस्तान: ग़लताँ, नूरे प्याले ख़्याल ॥ ३१४[3] ॥
दादू माता प्रेम का, रस मैं रह्या समाइ।
अंत न आवै जब लगैं, तब लगि पीवत जाइ ॥ ३१५ ॥
पीया तेता सुख भया, बाकी बहु बैराग।
ऐसैं जन थाकै नहीं, दादू उनमन लाग ॥ ३१६ ॥
निकट निरंजन लागि रहु, जब लगि अलख अभेव।
दादू पीवै राम रस, निहकामी निज सेव ॥ ३१७ ॥
राम रटनि छाडै नहीं, हरि लै लागा जाइ।
बीचैं हीं अटकै नहीं, कला कोटि दिखलाइ[4] ॥ ३१८ ॥
दादू हरि रस पीवताँ, कबहूँ अरुचि न होइ।
पीवत प्यासा नित नवा[5], पीवणहारा सोइ ॥ ३१९[6] ॥

---

१ एक तार, टकटकी। २ न्यारा, दूर। ३ साखी ३१४--दरअसल वह हुशियार (सचेत) है जो अपनी ख़बर से बेख़बर है यानी अपने तन मन की सुध बिसर गया है--जिस की अपने तन मन की ओर निगाह है (जो ख़ुद ख़बर है) वही बेहोश और ज़लील (पामाल) है—ऐसा अनमोल जन मालिक की याद के नशे के (प्रकाशनूर प्याले ख़्याल) मैं मतवाला व झूमता रहता है। ४ अभ्यासी के रास्ते मैं बड़े मन- ललचावन चमत्कार व कौतुक दीख पड़ैंगे उन मैं अटकना न चाहिये। ५ नया। ६ हरि रस पीने से कभी अघाय नहीं; पीनेवाला उसी का नाम है जिसे हर घूंट के साथ नई प्यास जगै।

[दादू] जैसे स्रवणाँ दोइ हैं, ऐसे हौंहिं अपार ।
रामकथा रस पीजिये, दादू बारंबार ॥ ३२० ॥
जैसे नैनाँ दोइ हैं, ऐसे हौंहिं अनंत ।
दादू चंद चकोर ज्यौं, रस पीवै भगवंत ॥ ३२१ ॥
ज्यौं रसना मुख एक है, ऐसे हौंहिं अनेक ।
तौ रस पीवै सेस ज्यौं, यौं मुख मीठा एक ॥ ३२२ ॥
ज्यौं घटि आतम एक है, ऐसे हौंहिं असंख ।
भरि भरि राखै राम रस, दादू एकै अंक ॥ ३२३ ॥
ज्यौं ज्यौं पीवै राम रस, त्यौं त्यौं बढ़ै पियास ।
ऐसा कोई एक है, बिरला दादू दास ॥ ३२४ ॥
राता माता राम का, मतवाला महमंत ।
दादू पीवत क्यौं रहे,[1] जे जुग जाहिं अनंत ॥ ३२५ ॥
दादू निर्मल जोति जल, बरिषा बारह मास ।
तेहिं रस राता प्राणिया, माता प्रेम पियास ॥ ३२६ ॥
रोम रोम रस पीजिये, एती रसना होइ ।
दादू प्यासा प्रेम का, यौं बिन तृपति न होइ ॥ ३२७ ॥
तन गृह छाडै लाज पति, जब रस माता होइ ।
जब लगि दादू सावधान, कदे[2] न छाडै कोइ ॥ ३२८ ॥
आँगणि एक कलाल[3] के, मतवाला रस माहिं ।
दादू देख्या नैन भरि, ता के दुबिधा नाहिं ॥ ३२९ ॥
पीवत चेतन जब लगैं, तब लगि लेवै आइ ।
जब माता दादू प्रेम रस, तब काहे कौं जाइ ॥ ३३० ॥
दादू अंतर आतमा, पीवै हरि जल नीर ।
सौंज[4] सकल लै उद्धरै, निर्मल होइ सरीर ॥ ३३१ ॥

---

१ पीने से क्यों रुके । २ कभी । ३ सतगुरु । ४ शौच = सफ़ाई ।

दादू मीठा राम रस, एक घूँट करि जाइ।
पुणग[1] न पीछे कौं रहै, सब हिरदे माहिँ समाइ॥ ३३२॥
चिड़ी चंच भरि ले गई, नीर निघटि नहिँ जाइ।
ऐसा बासण ना किया, सब दरिया माहिँ समाइ॥ ३३३॥
दादू अमली राम का, रस बिन रह्या न जाइ।
पलक एक पावै नहीं, तौ तबहि तलफि मरि जाइ॥३३४॥
दादू राता राम का, पीवै प्रेम अघाइ।
मतवाला दीदार का, माँगै मुक्ति बलाइ॥ ३३५॥
उज्जल भँवरा हरि कँवल, रस रुचि बारह मास।
पीवै निर्मल बासना, सो दादू निज दास॥ ३३६॥
नैनहुँ सौं रस पीजिये, दादू सुरति सहेत।
तन मन मंगल होत है, हरि सौं लागा हेत॥ ३३७॥
पिवै पिलावै राम रस, माता है हुसियार।
दादू रस पीवै घणाँ, औरौं का उपगार॥ ३३८॥
नाना बिधि पिया राम रस, केती भाँति अनेक।
दादू बहुत बिबेक[2] सौं, आतम अविगत एक॥ ३३९॥
परचै को पय[3] प्रेम रस, जे कोई पीवै।
मतवाला माता रहै, यौं दादू जीवै॥ ३४०॥
परचै का पय प्रेम रस, पीवै हित चित लाइ।
मनसा बाचा कर्मना, दादू काल न खाइ॥ ३४१॥
परचै पीवै राम रस, जुग जुग इस्थिर होइ।
दादू अविचल आतमा, काल न लागै कोइ॥ ३४२॥
परचै पीवै राम रस, सो अबिनासी अंग।
काल मीच[4] लागै नहीं, दादू साईं संग॥ ३४३॥

---

१ तनिक, कुछ। २ विवेक। ३ दूध। ४ मौत।

परचै पीवै राम रस, सुख मैं रहै समाइ ।
मनसा बाचा कर्मना, दादू काल न खाइ ॥ ३४४ ॥
परचै पीवै राम रस, राता सिरजनहार ।
दादू कुछ ब्यापै नहीं, ते छूटे संसार ॥ ३४५ ॥
अमृत भोजन राम रस, काहे न बिलसै खाइ ।
काल बिचारा क्या करै, रमि रमि राम समाइ ॥ ३४६ ॥

॥ सजीवन ॥

[दादू] जिव अजया[1] बिघ[2] काल है, छेलौ जाया सोइ ।
जब कुछ बस नहिँ काल का, तब मीनी[3] का मुख होइ ॥३४७॥
मन लौरू[4] के पंख है, उनमन चढ़ै अकास ।
पग रहि पूरे साच के, रोपि[5] रह्या हरि पास ॥ ३४८ ॥
तन मन बिरष[6] बबूल का, काँटे लागे सूल ।
दादू माखण ह्वै गया, काहू का अस्थूल ॥ ३४९ ॥
दादू संखा[7] सबद है, सुनहा[8] संसा[9] मारि ।
मन मींडक सौँ मारिये, संक्या[10] सर्प निवारि ॥ ३५० ॥
दादू गाँझो[11] ज्ञान है, भंजन[12] है सब लोक ।
राम दूध सब भरि रह्या, ऐसा अमृत पोष ॥३५१ ॥
दादू झूठा जीव है, गढ़िया गोबिँद बैन ।
मंसा मूँगो[13] पंख सौँ, सुरज सरीखे नैन ॥ ३५२ ॥
साईं दीया दत[14] घणाँ, तिसका वार न पार ।
दादू पाया राम धन, भाव भगति दीदार ॥ ३५३ ॥

॥ इति परचा को अंग समाप्त ॥ ४ ॥

---

१ बकरी । २ भेड़िया । ३ मिन्नी; बिल्ली । ४ पक्षी । ५ जमाना, लगाना । ६ वृक्ष । ७ सिंह । ८ कुत्ता । ९ संशय, चिंता । १० शंका = डर । ११ घी । १२ भाजन = बरतन । १३ हरा । १४ दात, बख़शिश ।

५—जरणा[1] को अंग

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवत: ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगत: ॥ १ ॥
को साधू राखै राम धन, गुर बाइक बचन बिचार ।
गहिला दादू क्यौं रहै, मरकत हाथ गँवार ॥ २[2] ॥
[दादू] मन हीं माहैं समझि करि, मन हीं माहिं समाइ
मन हीं माहैं राखिये, बाहरि कहि न जणाइ ॥ ३ ॥
दादू समझि समाइ रहु, बाहरि कहि न जणाइ ।
दादू अद्भुत देखिया, तहँ ना को आवै जाइ ॥४॥
कहि कहि क्या दिखलाइये, साईं सब जाणै ।
दादू परघट का कहै, कुछ समझि सयाणै ॥ ५ ॥
दादू मन ही माहैं ऊपजै, मनही माहिं समाइ ।
मन हीं माहैं राखिये, बाहरि कहि न जणाइ ॥ ६ ॥
लै बिचार लागा रहै, दादू जरता जाइ ।
कबहूँ पेट न आफरै,[3] भावै तेता खाइ ॥ ७ ॥
जिनि खोवै दादू राम धन, रिदै राखि जिनि जाइ ।
रतन जतन करि राखिये, चिंतामणि चित लाइ ॥ ८ ॥
सोई सेवग सब जरै, जेती उपजै आइ ।
कहि न जणावै और कौं, दादू माहिं समाइ ॥ ९ ॥
सोई सेवग सब जरै, जेता रस पीया ।
दादू गूझ[4] गँभीर का, परकास न कीया ॥ १० ॥

---

१ जरणा गुजराती भाषा में जरवुं शब्द से बना है, इस का अर्थ पचाना हज़म करना, धारण करना, गुप्त रखना, शांति, क्षमा इत्यादि है—पं० चंद्रिका प्रसाद । २ कोई बिरला साधू गुर बचन को बिचार कर नाम रूपी धन को सम्हाले रखता है; यह धन मूर्खों के पास नहीं टिकता जैसे गँवार के पल्ले रत्न [मरकत = पन्ना] । ३ अफरै, फूलै । ४ गूढ़, गुप्त ।

सोई सेवग सब जरै, जे अलख लखावा ।
दादू राखै रामधन, जेता कुछ पावा ॥ ११ ॥
सोई सेवग सब जरै, प्रेम रस खेला ।
दादू सो सुख कस कहै, जहँ आप अकेला ॥ १२ ॥
सोई सेवग सब जरै, जेता घट परकास ।
दादू सेवग सब लखै, कहि न जणावै दास ॥ १३ ॥
अजर जरै रसना झरै, घटि माहिँ समावै ।
दादू सेवग सो भला, जे कहि न जणावै ॥ १४ ॥
अजर जरै रसना झरै, घट अपना भरि लेइ ।
दादू सेवग सो भला, जारै जाण न देइ ॥ १५ ॥
अजर जरै रसना झरै, जेता सब पीवै ।
दादू सेवग सो भला, राखै रस जीवै ॥ १६ ॥
अजर जरै रसना झरै, पीवत थाकै नाहिँ ।
दादू सेवग सो भला, भरि राखै घट माहिँ ॥ १७ ॥
जरणा जोगी जुगि जुगि जीवै, झरणा मरि मरि जाइ
दादू जोगी गुरमुखी, सहजैं रहै समाइ ॥ १८ ॥
जरणा जोगी जुगि रहै, झरणा परलै होइ ।
दादू जोगी गुरमुखी, सहजि समाना सोइ ॥ १९ ॥
जरणा जोगी थिर रहै, झरणा घट फूटै ।
दादू जोगी गुरमुखी, काल थैं छूटै ॥ २० ॥
जरणा जोगी जग-पती, अबिनासी अवधूत ।
दादू जोगी गुरमुखी, निरंजन का पूत ॥ २१ ॥
जरै सु नाथ निरंजन बाबा, जरै सु अलख अभेव ।
जरै सु जोगी सब की जीवन, जरै सु जग मैं देव ॥ २२

जरै सु आप उपावनहारा, जरै सु जग-पति साईं।
जरै सु अलख अनूप है, जरै सु मरणा नाहीं ॥ २३ ॥
जरै सु अविचल राम है, जरै सु अमर अलेख।
जरै सु अविगत आप है, जरै सु जग मैं एक ॥ २४ ॥
जरै सु अविगत आप है, जरै सु अपरंपार।
जरै सु अगम अगाध है, जरै सु सिरजनहार ॥ २५ ॥
जरै सु निज निरकार है, जरै सु निज निर्धार।
जरै सु निज निर्गुण मई, जरै सु निज तत सार ॥ २६ ॥
जरै सु पूरण ब्रह्म है, जरै सु पूरणहार।
जरै सु पूरण परम गुर, जरै सु प्राण हमार ॥ २७ ॥
[दादू] जरै सु जोति स्वरूप है, जरै सु तेज अनंत।
जरै सु झिलिमिलि नूर है, जरै सु पुंज रहंत ॥ २८ ॥
[दादू] जरै सु परम प्रकास है, जरै सु परम उजास।
जरै सु परम उदीत है, जरै सु परम बिलास ॥ २९ ॥
[दादू] जरै सु परम पगार है, जरै सु परम बिगास।
जरै सु परम प्रभास है, जरै सु परम निवास ॥ ३० ॥
[दादू] एक बोल भूले हरी, सु कोइ न जाणे प्राण।
ओगुण मन आणे नहीं, और सब जाणै हरि जाण ॥३१॥
[दादू] तुम जीवौं के औगुण तजे, सु कारण कौण अगाध।
मेरी जरणा देखि करि, मति को सीखे साध ॥ ३२ ॥
पवना पानी सब पिया, धरती अरु आकास।
चंद सूर पावक मिले, पंचौं एक गरास ॥ ३३ ॥
चौदह तीन्यूँ लोक सब, ठूँगे[१] साँसै साँस।
दादू साधू सब जरै, सतगुर के बेसास[२] ॥ ३४ ॥

॥ इति जरणा को अंग समाप्त ॥ ५ ॥

---

१ ठूँसे, निगले। २ विश्वास।

६—हैरान को अंग

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवत: ।
वंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगत: ॥ १ ॥

रतन एक बहु पारिखू, सब मिलि करैं विचार ।
गूँगे गहिले बावरे, दादू वार न पार ॥ २ ॥

केते पारिख जौहरी, पंडित ज्ञाता ध्यान ·
जाण्या जाइ न जाणिये, का कहि कथिये ज्ञान ॥ ३ ॥

केते पारिख पचि मुए, कीमती कही न जाइ ।
दादू सब हैरान हैं, गूँगे का गुड़ खाइ ॥ ४ ॥

सब ही ज्ञानी पंडिता, सुर नर रहे उरझाइ ।
दादू गति गोबिंद की, क्यौं ही लखी न जाइ ॥ ५ ॥

जैसा है तैसा नाउँ तुम्हारा, ज्यौं है त्यौं कहि साईं ।
तूँ आपै जाणै आप कौं, तहँ मेरी गमि नाहीं ॥ ६ ॥

केते पारिख अंत न पावैं, अगम अगोचर माहीं ।
दादू कीमति कोइ न जाणै, खीर नीर की नाईं ॥ ७ ॥

जीव ब्रह्म सेवा करै, ब्रह्म बराबरि होइ ।
दादू जाणै ब्रह्म कौं, ब्रह्म सरीखा सोइ ॥ ८ ॥

वार पार को ना लहै, कीमति लेखा नाहिं ।
दादू एकै नूर है, तेज पुंज सब माहिं ॥ ९ ॥

हस्त पाँव नहिं सीस मुख, स्रवन नेत्र कहुँ कैसा ।
दादू सब देखै सुणै, कहै गहै है ऐसा ॥ १० ॥

पाया पाया सब कहैं, केतक देहुँ दिखाइ ।
कीमति किनहूँ ना कही, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥ ११ ॥

अपना भंजन[१] भरि लिया, उहाँ उता ही जाणि ।
अपणी अपणी सब कहैं, दादू बिड़द[२] बखाणि ॥ १२ ॥

पार न देवै आपणा, गोप गूझ[३] मन माँहिं ।
दादू कोई ना लहै, केते आवैं जाहिं ॥ १३ ॥

गूँगे का गुड़ का कहूँ, मन जानत है खाइ ।
त्यौं राम रसाइण पीवताँ, सो सुख कह्या न जाइ ॥१४॥

[दादू] एक जीभ केता कहूँ, पूरण ब्रह्म अगाध ।
बेद कतेबाँ मिति[४] नहीं, थकित भये सब साध ॥ १५ ॥

दादू मेरा एक मुख, किरति अनंत अपार ।
गुण केते परिमिति[५] नहीं, रहे बिचारि बिचारि ॥ १६ ॥

सकल सिरोमणि नाँउ है, तूँ है तैसा नाहिं ।
दादू कोई ना लहै, केते आव जाहिं ॥ १७ ॥

दादू केते कहि गये, अंत न आवै ओर ।
हम हूँ कहते जात हैं, केते कहसी होर[६] ॥ १८ ॥

[दादू] मैं का जानूँ का कहूँ, उस बलिये[७] की बात ।
क्या जानूँ क्यौंहीं रहै, मो पै लख्या न जात ॥ १९ ॥

दादू केते चलि गये, थाके बहुत सुजान ।
बातौं नाँव न नीकलै, दादू सब हैरान ॥ २० ॥

ना कहिं दिट्ठा ना सुण्या, ना कोइ आखणहार ।
ना कोइ उत्थौं थौं फिरया, ना उर वार न पार ॥ २१ ॥

नहीं मृतक नहिं जीवता, नहिं आवै नहिं जाइ ।
नहिं सूता नहिं जागता, नहिं भूखा नहिं खाइ ॥२२॥

---

१ बरतन । २ प्रतिज्ञा । ३ गुप्त और छिपा । ४ अंदाज़ । ५ नाप, तादाद, हद ।
६ और । ७ बलवान ।

न तहाँ चुप नहिं बोलणाँ, मैं तैं नाहीं कोइ ।
दादू आपा पर नहीं, न तहाँ एक न दोइ ॥ २३ ॥
एक कहूँ तौ दोइ है, दोइ कहूँ तौ एक ।
यौं दादू हैरान है, ज्यौं है त्यौं हीं देख ॥ २४ ॥
देखि दिवाने ह्वै गये, दादू खरे सयान ।
वार पार कोइ ना लहै, दादू है हैरान ॥ २५ ॥
[दादू] करणहार जे कुछ किया, सोई हूँ करि जाणि ।
जे तूँ चतुर सयाना जानराइ[1] , तौ याही परवाणि ॥२६॥
[दादू] जिन मोहन बाजी रची, सो तुम पूछौ जाइ ।
अनेक एक थैं क्यौं किये, साहिब कहि समझाइ ॥२६॥
घट परिचै सब घट लखै, प्राण परीचै प्राण ।
ब्रह्म परीचै पाइये, दादू है हैराण ॥ २८ ॥ (४-१५९)
चर्म दृष्टि देखे बहुत, आतम दृष्टी एकि ।
ब्रह्म दृष्टि परिचै भया, दादू बैठा देखि ॥२९॥ (४-१५७)
येई नैनाँ देह के, येई आतम होइ ।
येई नैनाँ ब्रह्म के, दादू पलटे दोइ ॥ ३० ॥ (४-१५८)

॥ इति हैरान को अंग समाप्त ॥ ६ ॥

---

१ जानकारों का राजा, भारी जनैया ।

७--लय को अंग

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवत:।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगत: ॥ १ ॥

[दादू] लय लागी तब जाणिये, जे कबहूँ छूटि न जाइ।
जीवत यौं लागी रहै, मूवाँ मंझि समाइ ॥ २ ॥

[दादू] जे नर प्राणी लय गता, सोई गत ह्वै जाइ।
जे नर प्राणी लय रता, सो सहजैं रहै समाइ ॥ ३ ॥

सब तजि गुण आकार के, निहचल मन ल्यौ लाइ।
आतम चेतन प्रेम रस, दादू रहै समाइ ॥ ४ ॥

तन मन पवना पंच गहि, निरंजन ल्यौ लाइ।
जहँ आतम तहँ परआतमा, दादू सहजि समाइ ॥ ५ ॥

अर्थ अनूपम आप है, और अनरथ भाई।
दादू ऐसी जानि करि, ता सौं ल्यौ लाई ॥ ६ ॥

ज्ञान भगति मन मूल गहि, सहज प्रेम ल्यौ लाइ।
दादू सब आरंभ तजि, जिनि काहू सँग जाइ ॥ ७ ॥

पहिली था सो अब भया, अब सो आगैं होइ।
दादू तीनौं ठौर की, बूझै बिरला कोइ ॥ ८ ॥

जोग समाधि सुख सुरति सौं, सहजैं सहजैं आव।
मुक्ता द्वारा महल का, इहै भगति का भाव ॥ ९ ॥

सहज सुन्नि मन राखिये, इन दून्यूँ के माहिं।
लय समाधि रस पीजिये, तहाँ काल भय नाहिं ॥ १० ॥

[दादू] बिन पाइन का पंथ है, क्यौंकरि पहुँचै प्राण। (१-१३५)
बिकट घाट औघट खरे, माहिं सिखर असमान ॥ ११ ॥

मन ताजी चेतन चढ़ै, ल्यौ की करै लगाम। [१-१३६]
सबद गुरू का ताजणाँ, कोइ पहुँचै साध सुजान ॥१२॥

प्रश्न—किहिँ मारग ह्वै आइया, किहिँ मारग ह्वै जाइ।
दादू कोई ना लहै, केते करैँ उपाइ ॥ १३ ॥

उत्तर—सुन्नहिँ मारग आइया, सुन्नहिँ मारग जाइ।
चेतन पैँडा सुरति का, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥१४॥

[दादू] पारब्रह्म पैँडा दिया, सहज सुरति लै सार।
मन का मारग माहिँ घर, संगी सिरजनहार ॥ १५ ॥

राम कहै जिस ज्ञान सौँ, अमृत रस पीवै।
दादू दूजा छाडि सब, लै लागी जीवै ॥ १६ ॥

राम रसाइन पीवताँ, जीव ब्रह्म ह्वै जाइ।
दादू आतम राम सौँ, सदा रहै ल्यौ लाइ ॥ १७ ॥

सुरति समाइ सनमुख रहै, जुगि जुगि जन पूरा।
दादू प्यासा प्रेम का, रस पीवै सूरा ॥ १८ ॥

[दादू] जहाँ जगत-गुर[१] रहत है, तहँ जे सुरति समाइ।
तौ इन हीं नैनौँ उलटि करि, कौतिग[२] देखै आइ ॥१९॥

अख्यूँ पसण खे पिरी, भीरे उलटौं मंझ।
जिते वेठो माँ पिरी, नीहारी दो हंझ ॥ २०[३] ॥

दादू उलटि अपूठा[४] आप मैं, अंतरि सोधि सुजाण।
सो ढिग तेरा बावरे, तजि बाहिर की बाणि[५] ॥ २१ ॥

सुरति अपूठी[४] फेरि करि, आतम माहैँ आण।
लागि रहै गुरदेव सौँ, दादू सोई सयाण ॥ २२ ॥

---

१ निरंजन। २ कौतुक। ३ आँखों को अंतर मेँ फेर कर प्रीतम को देख, जहाँ मेरा प्रीतम बैठा है उस को हंस ही लख सकते हैँ। ४ पीछे। ५ सुभाव, आदत।

जहँ आतम तहँ राम है, सकल रह्या भरपूर ।
अंतरगति ल्यौ लाइ रहु, दादू सेवग सूर ॥ २३ ॥

[दादू] अन्तरगति ल्यौ लाइ रहु, सदा सुरति सौं गाइ ।
यहु मन नाचै मगन ह्वै, भावै ताल बजाइ ॥ २४ ॥

[दादू] गावै सुरति सौं, बाणी बाजै ताल ।
यहु मन नाचै प्रेम सौं, आगैं दीनदयाल ॥ २५ ॥

[दादू] सब बातन की एक है, दुनिया थैं दिल दूरि ।
साईं सेती संग करि, सहज सुरति लै पूरि ॥ २६ ॥

दादू एक सुरति सौं सब रहै, पंचौं उनमन लाग ।
यहु अनभै उपदेस यहु, यहु परम जोग बैराग ॥ २७ ॥

[दादू] सहजैं सुरति समाइ ले, पारब्रह्म के अंग ।
अरस परस मिलि एक ह्वै, सनमुख रहिबा संग ॥ २८ ॥

सुरति सदा सनमुख रहै, जहाँ तहाँ लैलीन ।
सहज रूप सुमिरन करै, निहकर्मी दादू दीन ॥ २९ ॥

सुरति सदा स्याबति[1] रहै, तिन के मोटे भाग ।
दादू पीवै राम रस, रहै निरंजन लाग ॥ ३० ॥

दादू सेवा सुरति सौं, प्रेम प्रीति सौं लाइ ।
जहँ अबिनासी देव है, तहँ सुरति बिना को जाइ ॥ ३१ ॥

[दादू] ज्यौं वै बरत गगन थैं टूटै, कहाँ धरनि कहँ ठाम ।
लागी सुरति अंग थैं छूटै, सो कत[2] जीवै राम ॥ ३२ ॥

सहज जोग सुख मैं रहै, दादू निर्गुण जाणि ।
गंगा उलटी फेरि करि, जमुना माहैं आणि ॥ ३३ ॥

परआतम सो आतमा, ज्यौं जल उदक[3] समान ।
तन मन पाणी लौंण ज्यौं, पावै पद निर्बाण ॥ ३४ ॥

---

१ साबित=स्थिर । २ कहाँ । ३ जल ।

मन हीं सौं मन सेविये, ज्यौं जल जलहि समाय।
आतम चेतन प्रेम रस, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥ ३५ ॥
छाड़ै सुरति सरीर कौं, तेज पुंज मैं आइ। (४-१६२)
दादू ऐसैं मिलि रहै, ज्यौं जल जलहि समाइ ॥ ३६ ॥
यौं मन तजै सरीर कौं, ज्यौं जागत सो[1] जाइ।
दादू बिसरै देखताँ, सहजि सदा ल्यौ लाइ ॥ ३७ ॥
जिहि आसणि पहिली प्राण था, तेहि आसणि ल्यौ लाइ।
जे कुछ था सोई भया, कछू न ब्यापै आइ ॥ ३८ ॥
तन मन अपणा हाथ करि, ताही सौं ल्यौ लाइ।
दादू निर्गुण राम सौं, ज्यौं जल जलहि समाइ ॥ ३९ ॥
एक मना लागा रहै, अंत मिलैगा सोइ।
दादू जाके मन बसै, ता कौं दरसन होइ ॥ ४० ॥
दादू निबहै त्यूँ चलै, धरि धीरज मन माहिं।
परसैगा पिव एक दिन, दादू थाकै नाहिं ॥ ४१ ॥
जब मन मिर्तक ह्वै रहै, इंद्री बल भागा।
काया के सब गुण तजै, नीरंजन लागा ॥ ४२ ॥
आदि अंत मधि एक रस, टूटै नहिं धागा।
दादू एकै रहि गया, तब जाणी जागा ॥ ४३ ॥
जब लगि सेवग तन धरै, तब लगि दूसर आहि।
एकमेक ह्वै मिलि रहै, तौ रस पीवन थैं जाहि ॥ ४४ ॥
ये दून्यूँ ऐसो कहैं, कीजै कौण उपाइ।
ना मैं एक न दूसरा, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥ ४५ ॥

॥ इति लय को अंग समाप्त ॥ ७ ॥

---

[1] सोय जाय, नींद में हो जाय।

८ — निहकर्मी पतिव्रता को अंग

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
एक तुम्हारे आसिरै, दादू इहि बेसास[१] ।
राम भरोसा तोर है, नहिं करणी की आस ॥ २ ॥
रहणी राजस ऊपजै, करणी आपा होइ ।
सब थैं दादू निर्मला, सुमिरण लागा सोइ ॥ ३ ॥
[दादू] मन अपणा लैलीन करि, करणी सब जंजाल ।
दादू सहजैं निर्मला, आपा मेटि सँभाल ॥ ४ ॥
[दादू] सिद्धि हमारे साइयाँ, करामात करतार ।
रिद्धि हमारे राम हैं, आगम अलख अपार ॥ ५ ॥
गोब्यंद गोसाईं तुम्हैं अम्हंचा[२] गुरू, तुम्हैं अम्हंचा ज्ञान ।
तुम्हैं अम्हंचा देव, तुम्हैं अम्हंचा ध्यान ॥६॥
तुम्हैं अम्हंची पूजा, तुम्हैं अम्हंची पाती ।
तुम्हैं अम्हंचा तीरथ, तुम्हैं अम्हंचा जाती ॥ ७ ॥
तुम्हैं अम्हंचा नाद, तुम्हैं अम्हंचा भेद ।
तुम्हैं अम्हंचा पुराण, तुम्हैं अम्हंचा बेद ॥ ८ ॥
तुम्हैं अम्हंची जुगत, तुम्हैं अम्हंचा जोग ।
तुम्हैं अम्हंचा बैराग, तुम्हैं अम्हंचा भोग ॥ ९ ॥
तुम्हैं अम्हंची जीवनि, तुम्हैं अम्हंचा जप ।
तुम्हैं अम्हंचा साधन, तुम्हैं अम्हंचा तप ॥ १० ॥
तुम्हैं अम्हंचा सील, तुम्हैं अम्हंचा संतोष ।
तुम्हैं अम्हंची मुकति, तुम्हैं अम्हंचा मोष ॥ ११ ॥

---

१ विश्वास । २ अमचा = हमारा ।

तुम्हें अम्हंचा सिव, तुम्हें अम्हंची सक्ति ।
तुम्हें अम्हंचा आगम, तुम्हें अम्हंची उक्ति ॥ १२ ॥

तूं सति तूं अवगति तूं अपरंपार, तूं निराकार तुम्हंचा[1] नाम
दादू चा[2] बिस्राम, देहु देहु अवलंबन राम ॥ १३ ॥

[दादू] राम कहूँ ते जोड़िबा, राम कहूँ ते साखि ।
राम कहूँ ते गाइबा, राम कहूँ ते राखि ॥ १४[3] ॥

[दादू] कुल हमारे केसवा, सगा त सिरजनहार ।
जाति हमारी जगत-गुर, परमेसुर परिवार ॥ १५ ॥

[दादू] एक सगा संसार मैं, जिन हम सिरजे सोइ ।
मनसा बाचा कर्मना, और न दूजा कोइ ॥ १६ ॥

साईं सन्मुख जीवताँ, मरताँ सन्मुख होइ ।
दादू जीवण मरण का, सोच करै जिनि कोइ ॥ १७ ॥

साहिब मिल्या त सब मिले, भैंटे भैंटा होइ ।
साहिब रह्या त सब रहे, नहीं त नाहीं कोइ ॥ १८ ॥

साहिब रहताँ सब रह्या, साहिब जाताँ जाइ ।
दादू साहिब राखिये, दूजा सहज सुभाइ ॥ १९ ॥

सब सुख मेरे साइयाँ, मंगल अति आनंद ।
दादू सज्जन सब मिले, जब भैंटे परमानंद ॥ २० ॥

दादू रीझै राम पर, अनत न रीझै मन ।
मीठा भावै एक रस, दादू सोई जन ॥ २१ ॥

[दादू] मेरे हिरदै हरि बसै, दूजा नाहीं और ।
कहो कहाँ धौं राखिये, नहीं आन कौं ठौर ॥ २२ ॥

---

१ तुमचा=तुम्हारा। २ का। ३ नाम का सुमिरन ही मेरा पद जोड़ना है, वही मेरी साखी, वही मेरा गाना, वही मेरी धारना है—प० चं० प्र०।

[दादू] नारायण नैना बसै, मन हीं मोहनराइ ।
हिरदा माहैं हरि बसै, आतम एक समाइ ॥ २३ ॥

परम कथा उस एक की, दूजा नाहीं आन ।
दादू तन मन लाइ करि, सदा सुरति रस पान ॥ २४[1] ॥

[दादू] तन मन मेरा पीव सौं, एक सेज सुख सोइ ।
गहिला लोग न जाणही, पचि पचि आपा खोइ ॥ २५ ॥

[दादू] एक हमारे उरि बसै, दूजा मेल्या[2] दूरि ।
दूजा देखत जाइगा, एक रह्या भरपूर ॥ २६ ॥

निहचल का निहचल रहै, चंचल का चलि जाइ ।
दादू चंचल छाडि सब, निहचल सौं ल्यौ लाइ ॥ २७ ॥

साहिब रहताँ सब रह्या, साहिब जाताँ जाइ ।
दादू साहिब राखिये, दूजा सहज सुभाइ ॥ २८ ॥

मन चित मनसा पलक मैं, साईं दूरि न होइ ।
निहकामी निरखै सदा, दादू जीवनि सोइ ॥ २९ ॥

जहाँ नाँव तहँ नीति चाहिये, सदा राम का राज ।
निर्बिकार तन मन भया, दादू सीझै[3] काज ॥ ३० ॥

जिसकी खूबी खूब सब, सोइ खूब सँभारि ।
दादू सुंदरि खूब सौं, नख सिख साज सँवारि ॥ ३१ ॥

[दादू] पंच अभूषन पीव करि, सोलह सब ही ठाँव ।
सुंदरि यहु सिंगार करि, लै लै पिव का नाँव ॥ ३२ ॥

यह ब्रत सुंदरि लै रहै, तौ सदा सुहागनि होइ ।
दादू भावै पीव कौं, ता सम और न कोइ ॥ ३३ ॥

---

१ यह साखी केवल साधू दयालसरन जी की लिपि में दी हुई है।
२ डाला। ३ सरे, बने।

साहिब जी का भावसाँ, कोइ करै कलि माहिँ ।
मनसा बाचा कर्मना, दादू घट घट नाहिँ ॥ ३४ ॥
अज्ञा माहैँ बैसे ऊबै[1], अज्ञा आवै जाइ ।
अज्ञा माहिँ लेवै देवै, अज्ञा पहिरै खाइ ॥ ३५ ॥
अज्ञा माहैँ बाहरि भीतरि, अज्ञा रहै समाइ ।
अज्ञा माहैँ तन मन राखै, दादू रहि ल्यौ लाइ ॥ ३६ ॥
पतिव्रता गृह आपणे, करै खसम की सेव ।
ज्यौँ राखै त्यौँ हीं रहै, अज्ञाकारी टेव[2] ॥ ३७ ॥
[दादू] नीच ऊँच कुल सुंदरी, सेवा सारी होइ ।
सोई सुहागनि कीजिये, रूप न पीजै धोइ ॥ ३८ ॥
[दादू] जब तन मन सौंप्या राम कौँ, ता सनि का बिभिचार ।
सहज सील संतोष सत, प्रेम भगति लै सार ॥ ३९ ॥
पर पुरिषा[3] सब परिहरै, सुंदरि देखै जागि ।
अपणा पीव पिछाणि करि, दादू रहिये लागि ॥ ४० ॥
आन पुरिष हूँ बहनड़ी, परम पुरिष भरतार ।
हूँ अबला समझौँ नहीं, तूँ जाणै करतार ॥ ४१ ॥
जिस का तिस कौँ दीजिये, साईँ सन्मुख आइ ।
दादू नख सिख सौँपि सब, जिनि यहु बंट्या[4] जाइ ॥४२॥
सारा दिल साईँ सौँ राखै, दादू सोई सयान ।
जे दिल बंटै आपणा, सो सब मूढ़ अयान ॥ ४३ ॥
[दादू] सारौँ सौँ दिल तोरि करि, साईँ सौँ जोरै ।
साईँ सेती जोरि करि, काहे कौँ तोरै ॥ ४४ ॥
साहिब देवै राखणा[5], सेवग दिल चोरै ।
दादू सब धन साह का, भूला मन थोरै[6] ॥ ४५ ॥

---

१ बैठे उठै । २ आदत, सुभाव । ३ पुरुष । ४ बाँटा । ५ अमानत । ६ तुच्छ बुद्धि ।

[दादू] मनसा बाचा कर्मना, अंतरि आवै एक ।
ता कौं परसषि[1] रामजी, बातैं और अनेक ॥ ४६ ॥
[दादू] मनसा बाचा कर्मना, हिरदे हरि का भाव ।
अलख पुरिष आगे खड़ा, ता कै त्रिभुवन राव ॥ ४७ ॥
[दादू] मनसा बाचा कर्मना, हरिजी सौं हित होइ ।
साहिब सन्मुख संगि है, आदि निरंजन सोइ ॥ ४८ ॥
[दादू] मनसा बाचा कर्मना, आतुर कारणि राम ।
समरथ साइँ सब करै, परगट पूरे काम ॥ ४९ ॥
नारी पुरिषा देखि करि, पुरिषा नारी होइ ।
दादू सेवग राम का, सीलवंत है सोइ ॥ ५० ॥
पर पुरिषा रत बाँझणी,[2] जाणे जे फल होइ ।
जनम बिगोवै आपणा, दादू निर्फल सोइ ॥ ५१ ॥
दादू तजि भरतार कौं, पर पुरिषा रत होइ ।
ऐसी सेवा सब करै, राम न जाणे सोइ ॥ ५२ ॥
नारी सेवग तब लगैं, जब लग साइँ पास ।
दादू परसै आन कौं, ता की कैसी आस ॥ ५३ ॥
दादू नारी पुरिष कौं, जाणै जे बसि होइ ।
पिव की सेवा ना करै, कामणिगारी[3] सोइ ॥ ५४ ॥
कीया मन का भावताँ, मेटी आज्ञाकार ।
क्या ले मुख दिखलाइये, दादू उस भरतार ॥ ५५ ॥
करामाति[4] कलंक है, जा के हिरदे एक ।
अति आनँद बिभिचारणी, जा के खसम अनेक ॥ ५६ ॥
[दादू] पतिव्रता के एक है, बिभिचारणि के दोइ ।
पतिव्रता बिभिचारणी, मेला क्यौंकरि होइ ॥ ५७ ॥

---

१ प्रत्यक्ष । २ बाँझ ३ । टोनहिन, डाइन । ४ चमत्कार, सिद्धि शक्ति ।

पतिव्रता के एक है, दूजा नाहीं आन ।
बिभिचारणि के दोइ हैं, पर घर एक समान ॥ ५८ ॥

[दादू] पुरिष हमारा एक है, हम नारी बहु अंग ।
जे जे जैसी ताहि सौं, खेलै तिसही रंग ॥ ५९ ॥

दादू रहता राखिये, बहता देहु बहाइ ।
बहते संग न जाइये, रहते सौं ल्यौ लाइ ॥ ६० ॥

जिनि बाझै काहू कर्म सौं, दूजे आरंभ[1] जाइ ।
दादू एकै मूल गहि, दूजा देइ बहाइ ॥ ६१ ॥

बावैं देखि न दाहिणे, तन मन सन्मुख राखि ।
दादू निर्मल तत्त गहि, सत्य सबद यहु साखि ॥ ६२ ॥

[दादू] दूजा नैन न देखिये, स्त्रवणहुं सुनै न जाइ ।
जिभ्या आन न बोलिये, अंग न और सुहाइ ॥ ६३ ॥

चरणहुं अनत न जाइये, सब उलटा माहिं समाइ ।
उलटि अपूठा आप मैं, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥ ६४ ॥

[दादू] दूजे अंतर होत है, जिनि आणै मन माहिं ।
तहँ ले मन कौं राखिये, जहँ कुछ दूजा नाहिं ॥ ६५ ॥

भरम तिमर भाजै नहीं, रे जिय आन उपाइ ।
दादू दीपक साजि ले, सहजैं ही मिटि जाइ ॥ ६६ ॥

[दादू] सो बेदन[2] नहिं बावरे, आन[3] किये जे जाइ ।
सब दुख-भंजन[4] साइयाँ, ताही सौं ल्यौ लाइ ॥ ६७ ॥

[दादू] औषदि मूली कुछ नहीं, ये सब झूठी बात ।
जे औषदि ही जीविये, तौ काहे कौं मरि जात ॥ ६८ ॥

---

१ नया काम, उलझेड़ा । २ पीड़ा । ३ दूसरे के । ४ दुख-निवारन ।

मूल गहै सो निहचल बैठा, सुख मैं रहै समाइ ।
डाल पात भरमत फिरै, बेदौं[1] दिया बहाइ ॥ ६९ ॥
सो धक्का सुनहाँ[2] कौं देवै, घर बाहरि काढै ।
दादू सेवग राम का, दरबार न छाडै ॥ ७० ॥
साहिब का दर छाडि करि, सेवग कहीं न जाइ ।
दादू बैठा मूल गहि, डालौं फिरै बलाइ ॥ ७१ ॥
[दादू] जब लग मूल न सींचिये, तब लग हरया न होइ ।
सेवा निरफल सब गई, फिरि पछिताना सोइ ॥ ७२ ॥
दादू सींचे मूल के, सब सींच्या बिस्तार ।
दादू सींचे मूल बिन, बादि गई बेगार ॥ ७३ ॥
सब आया उस एक मैं, डाल पान फल फूल ।
दादू पीछैं क्या रह्या, जब निज पकड़्या मूल ॥ ७४ ॥
खेत न निपजे बीज बिन, जल सींचे क्या होइ ।
सब निरफल दादू राम बिन, जाणत है सब कोइ ॥ ७५ ॥
[दादू] जब मुख माहैं मेलिये, तब सबही तृप्ता होइ ।
मुख बिन मेले आन दिस, तृप्ति न मानै कोइ ॥ ७६ ॥
जब देव निरंजन पूजिये, तब सब आया उस माहिं ।
डाल पान फल फूल सब, दादू न्यारे नाहिं ॥ ७७ ॥
दादू टीका राम कौं, दूसर दीजै नाहिं ।
ज्ञान ध्यान तप भेष पष,[3] सब आये उस माहिं ॥ ७८ ॥
साधू राखै राम कौं, संसारी माया ।
संसारी पालव[4] गहै, मूल साधू पाया ॥ ७९ ॥
दादू जे कुछ कीजिये, अविगत बिन आराध ।
कहिबा सुणिबा देखिबा, करिबा सब अपराध ॥ ८० ॥

---

१ बेद कतेब । २ कुत्ता । ३ पक्ष या टेक । ४ पत्ता ।

सब चतुराई देखिये, जे कुछ कीजै आन ।
दादू आपा सौंपि सब, पिव कौं लेहु पिछान ॥ ८१ ॥
दादू दूजा कुछ नहीं, एक सत्त करि जाणि ।
दादू दूजा क्या करै, जिन एक लिया पहिचाणि ॥ ८२ ॥
[दादू] कोई बांछै मुकति फल, कोइ अमरापुरि बास ।
कोई बांछै परम गति, दादू राम मिलन की प्यास ॥ ८३ ॥
तुम हरि हिरदै हेत सौं, प्रगटहु परमानंद ।
दादू देखै नैन भरि, तब केता होइ अनंद ॥ ८४ ॥
प्रेम पियाला राम रस, हम कौं भावै येहि ।
रिधि सिधि माँगैं मुकति फल, चाहैं तिन कौं देहि ॥८५॥
कोटि बरस क्या जीवणा, अमर भये क्या होइ ।
प्रेम भगति रस राम बिन, का दादू जीवनि सोइ ॥ ८६ ॥
कछू न कीजै कामना, सगुण निर्गुण होइ ।
पलटि जीवतैं ब्रह्म गति, सब मिलि मानैं मोहिं ॥ ८७ ॥
घट अजरावर[1] ह्वै रहै, बंधन नाहीं कोइ ।
मुकता चौरासी मिटै, दादू संसै सोइ ॥ ८८ ॥
निकट निरंजन लागि रहु, जब लगि अलख अभेव । (४-२१७)
दादू पीवै राम रस, निहकामी निज सेव ॥ ८९ ॥
सालोक संगति रहै, सामीप सन्मुख सोइ ।
सारूप सारीखा भया, साजुज एकै होइ ॥ ९०[2] ॥
राम रसिक बांछै नहीं, परम पदारथ चार ।
अठ सिधि नौ निधि का करै, राता सिरजनहार ॥ ९१ ॥

१अमर । २ इस मैं चारो प्रकार की मुक्ति का वर्णन है-(१) सालोक अर्थात इष्ट के लोक मैं बासा मिलना, (२) सामीप=इष्ट के निकट रहना, (३) सारूप=इष्ट का रूप धारण करना, (४) सायुज्य=इष्ट मे लय हो जाना ।

स्वारथ सेवा कीजिये, ता थैं भला न होइ।
दादू ऊसर बाहि[1] करि, कोठा भरै न कोइ ॥ ९२ ॥
सुत वित माँगै बावरे, साहिब सी निधि मेलि[2]।
दादू वे निर्फल गये, जैसैं नागर बेलि ॥ ९३ ॥
फल कारण सेवा करै, जाचै त्रिभुवन-राव।
दादू सो सेवग नहीं, खेलै अपणा डाव[3] ॥ ९४ ॥
सहकामो सेवा करै, माँगै मुगध[4] गँवार।
दादू ऐसे बहुत हैं, फल के भूँचणहार[5] ॥ ९५ ॥
तन मन ले लागा रहै, राता सिरजनहार।
दादू कुछ माँगै नहीं, ते बिरला संसार ॥ ९६ ॥
[दादू कहै] साईं कौं सँभालताँ, कोटि बिघन टलि जाहिं।
राई मान बसंदरा, केते काठ जलाहिं[6] ॥ ९७ ॥
राम नाम गुर सबद सूँ, रे मन पेलि भरम।
निहकरमो सूँ मन मिल्या, दादू काटि करम ॥ ९८ ॥
सहजैं हीं सब होइगा, गुण इंद्री का नास।
दादू राम सँभालताँ, कटैं करम के पास[7] ॥ ९९ ॥
एक महूरत मन रहै, नाँव निरंजन पास।
दादू तब ही देखताँ, सकल करम का नास ॥ १०० ॥
एक राम के नाम बिन, जिव की जलण न जाइ।
दादू केते पचि मुए, करि करि बहुत उपाइ ॥ १०१ ॥
करमै करम काटै नहीं, करमै करम न जाइ।
करमै करम छुटै नहीं, करमै करम बधाइ[8] ॥ १०२ ॥

॥ इति निहकरमी पतिव्रता को अंग समाप्त ॥ ८ ॥

---

१ जोत वो कर। २ छोड़ कर। ३ दाँव। ४ मूर्ख। ५ चाहने वाले। ६ राई बराबर आग से काठ के ढेर जल जाते हैं। ७ फाँसे। ८ बढ़ाता है।

९—चितावणी को अंग

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवत: ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगत: ॥१॥

[दादू] जे साहिब कौं भावै नहीं, सो हम थैं जिनि होइ ।
सतगुर लाजै आपणा, साध न मानै कोइ ॥२॥

[दादू] जे साहिब कौं भावै नहीं, सो सब परिहरि प्राण ।
मनसा बाचा कर्मना, जे तूं चतुर सुजाण ॥३॥

[दादू] जे साहिब कौं भावै नहीं, जीव न कीजै रे ।
परिहरि बिषै बिकार सब, अमृत रस पीजै रे ॥ ४

दादू जे साहिब कौं भावै नहीं, सो बाट न बूझी रे
साईं सौं सन्मुख रहौ, इस मन सौं जूझो रे ॥ ५ ।

राम कहे सब रहत है, नख सिख सकल सरीर ।
राम कहे बिन जात है, समझो मनवाँ बीर ॥६॥

राम कहे सब रहत है, लाहा मूल सहेत ।
राम कहे बिन जात है, मूरख मनवाँ चेत ॥ ७ ॥

राम कहे सब रहत है, आदि अंत ल्यौ लाइ ।
राम कहे बिन जात है, यह मन बहुरि न आइ ॥

राम कहे सब रहत है, जीव ब्रह्म की लार ।
राम कहे बिन जात है, रे मन होउ हुसियार ॥ ९

दादू अचेत न होइये, चेतन सौं चित लाइ ।
मनवाँ सोता नींद भरि, साईं संग जगाइ ॥ १० ॥

दादू अचेत न होइये, चेतन सौं करि चित्त ।
ये अनहद जहँ थैं उपजै, खोजो तहँ ही नित्त ॥ १

दादू जन कुछ चेत करि, सौदा लीजै सार ।
निखर[1] कमाई न छूटणा, अपणे जीव बिचार ॥ १२ ॥

[दादू] कर साईं की चाकरी, ये हरि नाँव न छोड़ि ।
जाणा है उस देस कौं, प्रीति पिया सौं जोड़ि ॥ १३ ॥

आपा पर सब दूरि करि, राम नाम रस लागि ।
दादू औसर जात है, जागि सकै तो जागि ॥ १४ ॥

बार बार यहु तन नहीं, नर नारायण देह ।
दादू बहुरि न पाइये, जनम अमोलिक येह ॥ १५ ॥

दुख दरिया संसार है, सुख का सागर राम ।
सुख सागर चलि जाइये, दादू तजि बेकाम ॥ १६ ॥

एका एकी राम सौं, कै साधू का संग ।
दादू अनत न जाइये, और काल का अंग ॥ १७ ॥

[दादू] तन मन के गुण छाडि सब, जब होइ नियारा ।
तब अपने नैनहुँ देखिये, परघट पिव प्यारा ॥ १८ ॥

[दादू] झाँती पाये पसु पिरी, अंदरि सो आहे ।
हाँणी पाणे बिच्च मैं, मिहर न लाहे ॥ १९[2] ॥

दादू झाँसी पाये पसु पिरी, हाँणे लाइ म बेर ।
साथ सभोई हल्यौ, पोइ पसंदो केर ॥ २०[3] ॥

॥ इति चितावनी को अंग समाप्त ॥ ४ ॥

---

१ असल, निज । २ झाँकी (झाँती) पाकर या खिड़की मैं मुँह डाल कर प्रीतम (पिरी) का दर्शन कर (पसु) वह अंदर है—अब (हाँणी) वह आप (पाणे) तेरे घट मैं है अपनी मेहर न छोड़ेगा (लाहे) । ३ झाँकी पाकर प्रीतम का दर्शन कर, अब (हाँणे) देर (बेर) मत (म) लगा (लाइ)—साथी सभी (सभोई) चल दिये (हल्यौ) पीछे (पोइ) कौन (केर) देखेगा [पसंदो]

१०—मन को अंग

दादू नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवत: ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगत: ॥ १ ॥

दादू यहु मन बरजी बावरे, घट मैं राखो घेरि ।
मन हस्ती माता बहै, अंकुस दे दे फेरि ॥ २ ॥

हस्ती छूटा मन फिरै, क्यौँ ही बँध्या न जाइ ।
बहुत महावत पचि गये, दादू कुछ न बसाइ ॥ ३ ॥

जाहाँ थैँ मन उठि चलै, फेरि तहाँ ही राखि ।
तहँ दादू लयलीन करि, साध कहैँ गुर साखि ॥ ४ ॥

थोरैँ थोरैँ हटकिये[१], रहैगा ल्यौ लाइ ।
जब लागा उनमनी सौँ, तब मन कहीँ न जाइ ॥ ५ ॥

आड़ा दे दे[२] राम कौँ, दादू राखै मन ।
साखो दे इस्थिर करै, सोई साधू जन ॥ ६ ॥

सोई सूर जे मन गहै, निमख न चलने देइ ।
जब हीं दादू पग भरै, तब ही पाकड़ि लेइ ॥ ७ ॥

जेती लहरि समंद की, तेते मनहिँ मनोरथ मारि ।
वैसे सब संतोष करि, गहि आतम एक बिचारि ॥ ८ ॥

[दादू] जे मुख माहैँ बोलता, स्रवणहुँ सुणता आइ ।
नैनहु माहैँ देखता, सो अंतरि उरझाइ ॥ ९ ॥

दादू चम्बक देखि करि, लोहा लागै आइ ।
यौँ मन गुण इंद्री एक सौँ, दादू लीजे लाइ ॥ १० ॥

---

१ बरजना, रोकना । २ सन्मुख करके ।

मन का आसण जे जिव जाणै, तौ ठौर ठौर सब सूझै।
पंचौं आणि एक घरि राखै, तब अगम निगम सब बूझै ॥११॥
बैठे सदा एक रस पीवै, निरवैरी कत जूझै।
आतम राम मिलै जब दादू, तब अंगि न लागै दूजै ॥ १२ ॥
जब लगि यहु मन थिर नहीं, तब लगि परस न होइ।
दादू मनवाँ थिर भया, सहजि मिलैगा सोइ ॥ १३ ॥
[दादू] बिन अवलंबन क्यूँ रहै, मन चंचलि चलि जाइ।
इस्थिर मनवाँ तौ रहै, सुमिरण सेता लाइ ॥ १४ ॥
मन इस्थिर कर लीजे नाम।
दादू कहै तहाँ हीं राम ॥ १५ ॥
हरि सुमिरण सौं हेत करि, तब मन निहचल होइ।
दादू बेध्या प्रेम रस, बीष[1] न चाले सोइ ॥ १६ ॥
जब अंतरि उरझ्या एक सौं, तब थाके सकल उपाय।
दादू निहचल थिर भया, तब चलि कहीं न जाइ ॥ १७ ॥
[दादू] कउवा बोहिथ[2] बैसि करि, मंझि समंदाँ[3] जाइ।
उड़ि उड़ि थाका देखि तब, निहचल बैठा आइ ॥ १८ ॥
यहु मन कागद को गुडी,[4] उड़ि चढ़ी आकास।
दादू भीगे प्रेम जल, तब आइ रहै हम पास ॥ १९ ॥
दादू खीला गारि[5] का, निहचल थिर न रहाइ।
दादू पग नाहीं साच के, भरमै दह दिसि जाइ ॥ २० ॥
तब सुख आनँद आतमा, जे मन थिर मेरा होइ।
दादू निहचल राम सौं, जे करि जाणै कोइ ॥ २१ ॥

---

१ बिष, ज़हर। २ नाव, किश्ती। ३ समुद्र। ४ गुड्डी, पतंग। ५ गाड़ी की कील जो पहिये के साथ घूमती रहती है। [पंडित चंद्रिका प्रसाद ने गारिका का अर्थ "मिट्टी का" लिखा है]

मन निर्मल थिर होत है, राम नाम आनंद ।
दादू दरसन पाइये, पूरण परमानंद ॥ २२ ॥
[दादू] यौं फूटे थैं सारा भया, संधे संधि मिलाइ[1] ।
बाहुड़ि बिषै न भूँचिये,[2] तौ कबहूँ फूटि न जाइ ॥ २३ ॥
[दादू] यहु मन भूला सो गली, नरक जाण के घाट ।
अब मन अबिगत नाथ सौं, गुरू दिखाई बाट ॥ २४ ॥
[दादू] मन सुध स्याबत[3] आपणाँ, निहचल होवै हाथ ।
तौ इहँ ही आनंद है, सदा निरंजन साथ ॥ २५ ॥
जब मन लागै राम सौं, तब अनत काहे को जाइ ।
दादू पाणी लूँण ज्यूँ, ऐसैं रहै समाइ ॥ २६ ॥
ज्यूँ जल पैसै दूध मैं, ज्यूँ पाणी मैं लूँण ।
ऐसैं आतम राम सौं, मन हठ साधै कूँण ॥ २७ ॥ (२-७६)
मन का मस्तक मूँडिये, काम क्रोध के केस[4] ।
दादू बिषै बिकार सब, सतगुरु के उपदेस ॥ २८ ॥ (१-७७)
सो कुछ हम थैं ना भया, जा पर रीझै राम ।
दादू इस संसार मैं, हम आये बेकाम ॥ २९ ॥
क्या मुँह ले हँसि बोलिये, दादू दीजै रोइ ।
जनम अमोलक आपणा, चले अकारथ खोइ ॥ ३० ॥
जा कारण जग जीजिबे[5], सो पद हिरदे नाहिं ।
दादू हरि की भगति बिन, धृग जीवण कलि माहिं ॥ ३१ ॥
कीया मन का भावताँ, मेटी अज्ञाकार ।
क्या ले मुख दिखलाइये, दादू उस भरतार[6] ॥ ३२ ॥

---

१ जोड़ से जोड़ मिला कर । २ चाहिये । ३ साबित, स्थिर । ४ बाल । ५ जीने योग्य । ६ पति, पुरुष ।

इंद्री स्वारथ सब किया, मन माँगे सो दीन्ह ।
जा कारण जग सिरजिया, सो दादू कछू न कीन्ह ॥ ३३ ॥
कीया था इस काम कौं, सेवा कारण साज ।
दादू भूला बंदगी, सर्‍या न एकौ काज ॥ ३४ ॥
दादू बिषै बिकार सौं, जब लगि मन राता ।
तब लगि चित्त न आवई, त्रिभवन-पति दाता ॥ ३५ ॥ (२-६६)
[दादू] का जाणौं कब होइगा, हरि सुमिरन इकतार ।
का जाणौं कब छाड़ि है, यहु मन बिषै बिकार ॥३६ ॥ (२-६७)
बादिहि जनम गँवाइया, कीया बहुत बिकार ।
यहु मन इस्थिर ना भया, जहँ दादू निज सार ॥ ३७ ॥
[दादू] जिनि बिष पीवै बावरे, दिन दिन बाढ़ै रोग ।
देखत हीं मरि जाइगा, तजि बिषया रस भोग ॥ ३८ ॥
आपा पर सब दूरि करि, राम नाम रस लागि । (९-१०)
दादू औसर जात है, जागि सकै तौ जागि ॥ ३९ ॥
दादू सब कुछ बिलसताँ, खाताँ पीताँ होइ ।
दादू मन का भावता, कहि समझावै कोइ ॥ ४० ॥
दादू मन का भावता, मेरी कहै बलाइ ।
साच राम का भावता, दादू कहु सुणि आइ ॥ ४१ ॥
ये सब मन का भावता, जे कुछ कीजे आन ।
मन गहि राखै एक सौं, दादू साध सुजान ॥ ४२ ॥
जे कुछ भावै राम कौं, सो तत कहि समझाइ ।
दादू मन का भावता, सब को कहै बनाइ ॥ ४३ ॥
पैंडे पग चालै नहीं, होइ रह्या गलियार[1] ।
राम रथि निबहै नहीं, खैबे कौं हुसियार ॥ ४४ ॥

---

[1] अड़ियल ।

[दादू] का परमोधै आन कौं, आपण बहिया[1] जात ।
औरौं कौं अमृत कहै, आपण हीं बिष खात ॥ ४५ ॥
[दादू] पंचौं ये परमोधि ले, इन हीं कूँ उपदेस ।
यहु मन अपणा हाथ करि, तौ चेला सब देस ॥४६॥ (१-११९)
[दादू] पंचौं का मुख मूल है, मुख का मनवाँ होइ ।
यहु मन राखै जतन करि, साध कहावै सोइ ॥ ४७ ॥
[दादू] जब लगि मन के दोइ गुण, तब लग निपणा[2] नाहिं ।
द्वै गुण मन के मिटि गये, तब निपणा मिलि माहिं ॥ ४८ ॥
काचा पाका जब लगैं, तब लगि अंतर होइ ।
काचा पाका दूरि करि, दादू एकै सोइ ॥ ४९ ॥
सहज रूप मन का भया, तब द्वै द्वै मिटी तरंग ।
ताता सीला सम भया, तब दादू एकै अंग ॥ ५० ॥
[दादू] बहु-रूपी मन तब लगैं, जब लगि माया रंग ।
जब मन लागा राम सौं, तब दादू एकै अंग ॥ ५१ ॥
हीरा[3] मन पर राखिये, तब दूजा चढ़ै न रंग ।
दादू यौं मन थिर भया, अबिनासी के संग ॥ ५२ ॥
सुख दुख सब झाँईं[4] पड़ै, तब लगि काचा मन ।
दादू कुछ व्यापै नहीं, तब मन भया रतन ॥ ५३ ॥
पाका मन डोलै नहीं, निहचल रहै समाइ ।
काचा मन दह दिसि फिरै, चंचल चहुँ दिसि जाइ ॥ ५४ ॥
सीप सुधा रस ले रहै, पिवै न खारा नीर ।
माहैं मोती नीपजै, दादू बंद सरीर ॥ ५५ ॥

---

१ वहा । २ निपणा यानी जिस में पानी का मेल न हो (जैसा कि सुच्चे दूध के लिये बोला जाता है), विना मेल के, शुद्ध । ३ हीरा का तात्पर्य राम नाम से है । ४ छाया, असर ।

दादू मन पंगुल भया, सब गुण गये बिलाइ।
है काया नव-जोबनी[1], मन बूढ़ा ह्वै जाइ ॥ ५६ ॥

[दादू] कच्छिब अपने करि लिये, मन इंद्री निज ठौर। (१-८९)
नाँइ निरंजन लागि रहु, प्राणी परिहरि और ॥ ५७ ॥

मन इंद्री आँधा किया, घट मैं लहरि उठाइ।
साँई सतगुर छाड़ि करि, देखि दिवाना जाइ ॥ ५८ ।

[दादू कहै] राम बिना मन रंक[2] है, जाचै तीन्यूँ लोक।
जब मन लागा राम सौं, तब भागे दलिदर दोष ॥ ५९ ।

इंद्री का आधीन मन, जीव जंत सब जाचै।
तिणैं तिणैं[3] के आगैं दादू, तिहूँ लोक फिरि नाचै ॥ ६०

इंद्री अपणै बसि करै, सो काहे जाचण जाइ।
दादू इस्थिर आतमा, आसण बैसै आइ ॥ ६१ ॥

मन मनसा दून्यूँ मिले, तब जिव कीया भाँड[4]।
पंचौं का फेर्‍या फिरै, माया नचावै राँड ॥ ६२ ॥

नकटी[5] आगैं नकटा[6] नाचै, नकटी ताल बजावै।
नकटी आगैं नकटा गावै, नकटी नकटा भावै ॥ ६३ ।

पाँचौं इंद्री भूत है, मनवाँ खेतरपाल[7]।
मनसा देवी पूजिये, दादू तीन्यूँ काल ॥ ६४ ॥

जीवत लूटैं जगत सब, मिर्तक लूटैं देव।
दादू कहाँ पुकारिये, करि करि मूए सेव ॥ ६५ ॥

अगनि धोम[8] ज्यौं नीकलै, देखत सबै बिलाइ।
त्यौं मन बिछुट्या राम सौं, दह दिसि बीखरि जाइ ॥ ६६

---

१ तरुण। २ भिखमगा ३ तुच्छों या नीचों। ४ मसखरा, बेहूदा। ५ मनसा ६ मन। ७ राजा। ८ धुआँ।

घर छाडे जब का गया, मन बहुरि न आया ।
दादू अगनि के धोम ज्यौँ, खुर खोज न पाया ॥ ६७ ॥
सब काहू के होत है, तन मन पसरै जाइ ।
ऐसा कोई एक है, उलटा माहिँ समाइ ॥ ६८ ॥
क्यौँ करि उलटा आणिये, पसरि गया मन फेरि ।
दादू डोरी सहज की, यौँ आणै घरि घेरि ॥ ६९ ॥
[दादू] साध सबद सौँ मिलि रहै, मन राखै बिलमाइ ।
साध सबद बिन क्यौँ रहै, तब हीं बीखरि जाइ ॥ ७० ॥
चंचल चहुँ दिसि जात है, गुर बायक सूँ बंधि ।
दादू संगति साध की, पारब्रह्म सूँ संधि ॥ ७१ ॥ (१-८४)
एक निरंजन नाँव सौँ, साधू संगति माहिँ ।
दादू मन बिलमाइये, दूजा कोई नाहिँ ॥ ७२ ॥
तन मैँ मन आवै नहीँ, निस दिन बाहरि जाइ ।
दादू मेरा जिव दुखी, रहै नहीँ ल्यौ लाइ ॥ ७३ ॥
तन मैँ मन आवै नहीँ, चंचल चहुँ दिसि जाइ ।
दादू मेरा जिव दुखी, रहै न राम समाइ ॥ ७४ ॥
कोटि जतन करि करि मुए, यहु मन दह दिसि जाइ ।
राम नाम रोक्या रहै, नाहीँ आन उपाइ ॥ ७५ ॥
यहु मन बहु बकवाद सौँ, बाइ भूत ह्वै जाइ ।
दादू बहुत न बोलिये, सहजैँ रहै समाइ ॥ ७६ ॥
भूला भौँदू फेरि मन, मूरख मुग्ध गँवार ।
सुमिरि सनेही आपणा, आतम का आधार ॥ ७७ ॥
मन माणिक मूरख राखि रे, जण जण हाथि न देहु ।
दादू पारिख जौहरी, राम साध दोइ लेहु ॥ ७८ ॥

[दादू] मार्‍याँ बिन माने नहीं, यहु मन हरि की आन ।
ज्ञान खड़ग गुरदेव का, ता सँग सदा सुजान ॥७९॥ (१-८६)
मन सिरगा मारै सदा, ता का मीठा माँस ।
दादू खाइबे कौं हिलया, ता थैं आन उदास[1] ॥ ८० ॥
कह्या हमारा मानि मन, पापी परिहरि काम ।
बिषया का सँग छाड़ि दे, दादू कहि रे राम ॥ ८१ ॥
केता कहि समुझाइये, माने नहीं निलज्ज ।
मूरख मन समझै नहीं, कीये काज अकज्ज ॥ ८२ ॥
मन हीं मंजन कीजिये, दादू दरपण देह ।
माहैं मूरति देखिये, इहिं औसर करि लेह ॥ ८३ ॥
सब हीं कारा[2] होत है, हरि बिन चितवत आन ।
क्या कहिये समझै नहीं, दादू सिखवत ज्ञान ॥ ८४ ॥
[दादू] पाणी धोवैं बावरे, मन का मैल न जाइ ।
मन निर्मला तब होइगा, जब हरि के गुण गाइ ॥ ८५ ॥
[दादू] ध्यान धरैं का होत है, जे मन नाहिं निर्मल होइ ।
तौ बग[3] सब हीं ऊधरैं, जे यहि बिधि सीझै कोइ ॥ ८६ ॥
[दादू] ध्यान धरैं का होत है, जे मन का मैल न जाइ ।
बग मीनी का ध्यान धरि, पसू बिचारे खाइ ॥ ८७ ॥
[दादू] काले थैं धौला भया, दिल दरिया मैं धोइ ।
मालिक सेती मिलि रह्या, सहजैं निर्मल होइ ॥ ८८ ॥
[दादू] जिस का दर्पण ऊजला, सो दर्सण देखै माहिं ।
जिस की मैली आरसी, सो मुख देखै नाहिं ॥ ८९ ॥
दादू निर्मल सुद्ध मन, हरि रँग राता होइ ।
दादू कंचन करि लिया, काच कहै नहिं कोइ ॥ ९० ॥

---

१ और भोग बेस्वाद [उदास] होगये । २ काला, मलीन । ३ बकुला ।

यहु मन अपना थिर नहीं, करि नहिं जाणै कोइ।
दादू निर्मल देव कौं, सेवा क्यौं करि होइ॥ ९१॥
[दादू] यहु मन तीन्यूँ लोक मैं, अरस परस सब होइ।
देही की रष्या करै, हम जिनि भीटै कोइ॥ ९२[1]॥
[दादू] देह जतन करि राखिये, मन राख्या नहिं जाइ।
उत्तिम मद्धिम बासना, भला बुरा सब खाइ॥ ९३॥
दादू हाड़ौं मुख भर्‌या, चाम रह्या लपटाइ।
माहैं जिभ्या माँस की, ताही सेती खाइ॥ ९४॥
नऊ दुवारे नरक के, निस दिन बहै बलाइ।
सुची[2] कहाँ लौं कीजिये, राम सुमिरि गुण गाइ॥ ९५॥
प्राणी तन मन मिलि रह्या, इंद्री सकल बिकार।
दादू ब्रह्मा सुद्र घरि, कहाँ रहै आचार॥ ९६॥
दादू जीवै पलक मैं, मरताँ कल्प बिहाइ।
दादू यहु मन मसकरा, जिनि कोई पतियाइ॥ ९७॥
[दादू] मूवा मन हम जीवत देख्या, जैसे मरहट[3] भूत।
मूवाँ पीछैं उठि उठि लागै, ऐसा मेरा पूत॥ ९८॥
निहचल करताँ जुग गये, चंचल तब हीं होइ।
दादू पसरै पलक मैं, यहु मन मारै मोहिं॥ ९९॥
दादू यहु मन मींडका[4], जल सौं जीवै सोइ।
दादू यहु मन रिंद[5] है, जिनि रु पतीजे कोइ॥ १००॥
माहैं सूषिम[6] ह्वै रहै, बाहरि पसारै अंग।
पवन लागि पोढ़ा भया, काला नाग भुवंग॥ १०१॥

---

१ लोग देही की छुआ छूत तो बचाते हैं पर मन हर जगह स्पर्श करता फिरता है—[भीटै =छू जाय] २ सफ़ाई। ३ मरघट। ४ मेंडक। ५ लामज़हब, गया गुज़रा। ६ सूक्ष्म।

मन भुवंग बहु बिष भस्या, निर्बिष क्यौं हीं न होइ ।
दादू मिलया गुर गारुड़ी[1], निर्बिष कीया सोइ ॥ १०२ ॥
सुपना तब लग देखिये, जब लग चंचल होइ ।
जब निहचल लागा नाँव सौं, तब सुपना नाहीं कोइ ॥१०३॥
जागत जहँ जहँ मन रहै, सोवत तहँ तहँ जाइ ।
दादू जे जे मन बसै, सोइ सोइ देखै आइ ॥ १०४ ॥
दादू जे जे चित बसै, सोइ सोइ आवै चीत ।
बाहर भीतर देखिये, जाही सेती प्रीत ॥ १०५ ॥
सावण हरिया देखिये, मन चित ध्यान लगाइ ।
दादू केते जुग गये, तौ भी हस्या न जाइ ॥ १०६ ॥
जिस की सुरति जहाँ रहै, तिस का तहँ बिस्राम ।
भावै माया मोह मैं, भावै आतम राम ॥ १०७ ॥
जहँ मन राखै जीवताँ, मरताँ तिस घरि जाइ ।
दादू बासा प्राण का, जहँ पहली रह्या समाइ ॥ १०८ ॥
जहाँ सुरति तहँ जीव है, जहँ नाहीं तहँ नाहिँ ।
गुण निर्गुण जहँ राखिये, दादू घर बन माहिँ ॥ १०९ ॥
जहाँ सुरति तहँ जीव है, आदि अंत अस्थान ।
माया ब्रह्म जहँ राखिये, दादू तहँ बिस्राम ॥ ११० ॥
जहाँ सुरति तहँ जीव है, जिवन मरण जिस ठौर ।
बिष अमृत जहँ राखिये, दादू नाहीं और ॥ १११ ॥
जहाँ सुरति तहँ जीव है, जहँ जाणै तहँ जाइ ।
गम्म अगम जहँ राखिये, दादू तहाँ समाइ ॥ ११२ ॥
मन मनसा का भाव है, अंत फलैगा सोइ ।
जब दादू बाणक[2] बण्या, तब आसै आसण होइ ॥ ११३ ॥

---

१ साँप का बिष झाड़ने वाला । २ संयोग ।

जप तप करणी करि गये, सरग पहूँते[1] जाइ।
दादू मन की बासना, नरक पड़े फिरि आइ ॥११४॥

पाका काचा ह्वै गया, जीत्या हारै डाव[2]।
अंत काल गाफिल भया, दादू फिसले पाँव ॥ ११५ ॥

[दादू] यहु मन पंगुल पंच दिन, सब काहू का होइ।
दादू उतरि अकास थैं, धरती आया सोइ ॥ ११६ ॥

ऐसा कोई एक मन, मरै सो जीवै नाहिं।
दादू ऐसे बहुत हैं, फिरि आवैं कलि माहिं ॥ ११७ ॥

देखा देखी सब चले, पारि न पहुँच्या जाइ।
दादू आसणि पहल[3] के, फिरि फिरि बैठे आइ ॥११८॥

बरतण[4] एकै भाँति सब, दादू संत असंत।
भिन्न भाव अंतर घणा, मनसा तहाँ गच्छंत[5] ॥ ११९ ॥

यहु मन मारै मोमिनाँ, यहु मन मारै मीर।
यहु मन मारै साविकाँ, यहु मन मारै पीर ॥ १२० ॥

मन मारे मुनियर[6] मुए, सुर नर किये सँघार।
ब्रह्मा बिस्नु महेस सब, राखै सिरजनहार ॥ १२१ ॥

मन बाहे[7] मुनियर बड़े, ब्रह्मा बिस्नु महेस।
सिध साधक जोगी जती, दादू देस बिदेस ॥ १२२ ॥

पूजा मान बड़ाइयाँ, आदर माँगै मन।
राम गहै सब परिहरै, सोई साधू जन ॥ १२३ ॥

जहँ जहँ आदर पाइये, तहाँ तहाँ जिव जाइ।
बिन आदर दीजे राम रस, छाड़ि हलाहल खाइ ॥१२४॥

---

१ पहुँचे। २ दाँव। ३ पहिले; —पहलू या बाज़ के अर्थ भी लगते हैं। ४ बर्ताव। ५ जाता है; सम्बंध रखती है। ६ मुनिवर। ७ बहाये।

करणो किरका[1] को नहीं, कथणी अनत अपार।
दादू यूँ क्यूँ पाइये, रे मन मूढ़ गँवार ॥१२५॥
दादू मन मितंक भया, इन्द्री अपणै हाथ।
तौ भी कदे[2] न कीजिये, कनक कामिनी साथ ॥१२६
अब मन निरभय घरि नहीं, भय मैं बैठा आइ।
निरभय सँग थैं बीछुट्या, तब कायर ह्वै जाइ ॥१२७॥
जब मन मितंक ह्वै रहै, इन्द्री बल भागा।
काया के सब गुण तजै, नीरंजन लागा ॥१२८॥ (७-४
आदि अंत मधि एक रस, टूटै नहिं धागा।
दादू एकै रहि गया, तब जाणी जागा ॥१२९॥ (७
दादू मन के सीस मुख, हस्त पाँव है जीव।
स्त्रवण नेत्र रसना रटै, दादू पाया पीव ॥१३०॥
जहँ के नवाये सब नवैं, सोइ सिर करि जाणि।
जहँ के बुलाये बोलिये, सोइ मुख परवाणि ॥१३१॥
जहँ के सुणाये सब सुणैं, सोई स्त्रवण सयाण।
जहँ के दिखाये देखिये, सोइ नैन सुजाण ॥१३२॥
[दादू] मन हीं सौं मल ऊपजै, मन हीं सौं मल धोइ
सीख चलै गुर साध की, तौ तूँ निरमल होइ ॥१३३॥
दादू मन हीं माया ऊपजै, मन हीं माया जाइ।
मन हीं राता राम सौं, मन हीं रह्या समाइ ॥१३४॥
[दादू] मन हीं मरणा ऊपजै, मनहीं मरणा खाइ।
मन अविनासी ह्वै रह्या, साहिब सौं ल्यौ लाइ ॥१३५॥
मन हीं सन्मुख नूर है, मन हीं सन्मुख तेज।
मन हीं सन्मुख जोति है, मन हीं सन्मुख सेज ॥१३६

१ किनका मात्र। २ कभी।

मन हीं सौं मन थिर भया, मन हीं सौं मन लाइ ।
मन हीं सौं मन मिलि रह्या, दादू अनत न जाइ ॥१३७॥

॥ इति मन को अंग समाप्त ॥ १० ॥

११—सुषिम[1] जन्म को अंग

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवत: ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगत: ॥१॥
[दादू] चौरासी लख जीव को, परकोरति घट माहिं ।
अनेक जनम दिन के करै, कोई जाणै नाहिं ॥२॥
[दादू] जेते गुण व्यापैं जीव कौं, तेते ही अवतार ।
आवागवन यहु दूरि करि, समर्थ सिरजनहार ॥ ३ ॥
सब गुण सब ही जीव के, दादू व्यापैं आइ ।
घर माहैं जामै मरै, कोई न जाणै ताहि ॥४॥
जीव जन्म जाणै नहीं, पलक पलक मैं होइ ।
चौरासी लख भोगवै, दादू लखै न कोइ ॥५॥
अनेक रूप दिन के करै, यहु मन आवै जाइ ।
आवागवन मन का मिटै, तब दादू रहै समाइ ॥ ६ ॥
निस बासर यहु मन चलै, सूषिम जीव सँघार ।
दादू मन थिर कीजिये, आतम लेहु उबारि ॥ ७ ॥
कबहूँ पावक कबहूँ पाणी, धर[2] अंबर[3] गुण बाइ[4] ।
कबहूँ कुंजर कबहूँ कीड़ी, नर पसुवा ह्वै जाइ ॥ ८ ॥
सूकर स्वान सियाल[5] सिंघ, सर्प रहै घट माहिं ।
कुंजर कीड़ी जीव सब, पाँडे[6] जाणै नाहिं ॥ ९ ॥

॥ इति सूषिम जन्म को अंग समाप्त ॥ ११

१२—माया को अंग

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥

साहिब है पर हम नहीं, सब जग आवै जाइ।
दादू सुपिना देखिये, जागत गया बिलाइ ॥ २ ॥

[दादू] माया का सुख पंच दिन, गर्व्यौ कहा गँवार।
सुपिनै पायौ राज धन, जात न लागै बार ॥३॥

[दादू] सुपिनै सूता प्राणिया, कीये भोग बिलास।
जागत झूठा ह्वै गया, ता की कैसी आस ॥ ४ ॥

यौं माया का सुख मन करै, सेज्या सुंदरि पास।
अंति काल आया गया, दादू होहु उदास ॥ ५ ॥

जे नाहीं सो देखिये, सूता सुपिनै माहिं।
दादू झूठा ह्वै गया, जागै तौ कुछ नाहिं ॥ ६ ॥

यहु सब माया मिर्ग-जल[1], झूठा झिलिमिलि होइ।
दादू चिलका देखि करि, सति करि जाना सोइ ॥७॥

झूठा झिलिमिलि मिर्ग-जल, पाणी करि लीया।
दादू जग प्यासा मरै, पसु प्राणी पीया ॥ ८ ॥

छलावा छलि जाइगा, सुपिना बाजी सोइ।
दादू देखि न भूलिये, यहु निज रूप न होइ ॥ ९ ॥

सुपिनैं सब कुछ देखिये, जागै तौ कुछ नाहिं।
ऐसा यहु संसार है, समझि देखि मन माहिं ॥१०॥

[दादू] ज्यौं कुछ सुपिनैं देखिये, तैसा यहु संसार।
ऐसा आपा जाणिये, फूल्यौ कहा गँवार ॥ ११ ॥

---

१ मृग-जल से अभिप्राय मरीचिका या सराब से है जहाँ बालू के मैदान की चमक दूर से देख कर मृग को पानी का धोखा होता है और उस के पीछे प्यास बुझाने को दौड़ता है।

[दादू] जतन जतन करि राखिये, दिढ़ गहि आतम मूल ।
दूजा दृष्टि न देखिये, सब ही सैंबल फूल ॥१२॥
[दादू] नैनहुँ भरि नहिं देखिये, सब माया का रूप ।
तहँ ले नैना राखिये, जहँ है तत्त अनूप ॥१३॥
हस्ती, हय, बर, धन देखि करि, फूल्यौ अंग न माइ[1] ।
भेरि[2] दमामा[3] एक दिन, सब ही छाड़े जाइ ॥१४॥
[दादू] माया बिहड़ै[4] देखताँ, काया संग न जाइ ।
कृत्तम बिहड़ै बावरे, अजरावर[5] ल्यौ लाइ ॥१५॥
[दादू] माया का बल देखि करि, आया अति अहंकार ।
अंध भया सूझै नहीं, का करिहै सिरजनहार ॥१६॥
मन मनसा माया रती[6], पंच तत्त परकास ।
चौदह तीन्यूँ लोक सब, दादू होइ उदास ॥१७॥
माया देखे मन खुसी, हिरदै होइ बिगास ।
दादू यहु गति जीव की, अंति न पूगै[7] आस ॥१८॥
मन की मूठि न माँडिये, माया के नीसाण ।
पीछै ही पछिताहुगे, दादू खोटे बाण ॥१९[8] ॥
कुछ खाताँ कुछ खेलताँ, कुछ सोवत दिन जाइ ।
कुछ बिषियाँ रस बिलसताँ, दादू गये बिलाइ ॥२०॥

---

१ समाय। २ शहनाई, नफ़ीरी। ३ डंका। ४ बिछुड़ै। ५ अकाल पुरुष।
६ रत, लौलीन। ७ पूरी होय।

८ साखी १६ के अर्थ पंडित चंद्रिका प्रसाद ने विचित्र लिखे हैं। वह "बाण" के मानी तीर के, "मूठ"=कमान, "नीसाण"=निशाना के लगाते हैं। यह अर्थ खींचा तानी के और अशुद्ध जान पड़ते हैं क्योंकि माया को मन के तीर का निशाना "न" बनाना उलटी बात होगी, और "खोटे" तीर का मुहावरा भी कभी सुनने में नहीं आया थोथे तीर अलबत्ते बोलते हैं! हमारी समझ में तो सीधे सादे मतलब यह है कि मन की हठ [मूठ] को रोको [न माँडिये=न करिये] जिस का झुकाव या रुचि [नीसाण] माया की ओर होती है; नहीं तो इस बुरी आदत [खोटे बाण] के लिये पीछे पछताना पड़ेगा।

माखण मन पाहण भया, माया रस पीया।
पाहण मन माखण भया, राम रस लीया ॥ २१ ॥
[दादू] माया सौँ मन बीगड़्या, ज्यौँ काँजी करि दूध।
है कोई संसार मैं, मन करि देवै सूध[1] ॥ २२ ॥
गंदो सैाँ गंदा भया, यौँ गंदा सब कोइ।
दादू लागै खूब सैाँ, तौ खूब सरीखा होइ ॥२३॥
[दादू] माया सैाँ मन रत भया, बिषै रस्स माता।
दादू साचा छाड़ि करि, झूठे रँग राता ॥ २४ ॥
माया के सँगि जे गये, ते बहुरि न आये।
दादू माया डाकिणी[2], इन केते खाये ॥२५॥
[दादू] माया मोट बिकार की, कोइ न सकई डारि।
बहि बहि मूए बापुरे, गये बहुत पचि हारि ॥२६॥
[दादू] रूप राग गुण अँड़सरे[3], जहँ माया तहँ जाइ।
बिद्या अष्यर[4] पंडिता, तहाँ रहे घर छाइ ॥२७॥
साध न कोई पग भरै, कबहूँ राज दुवारि।
दादू उलटा आप मैं, बैठा ब्रह्म बिचारि ॥२८॥
[दादू] अपणे अपणे घरि गये, आपा अंग बिचारि।
सहकामी माया मिले, निहकामी ब्रह्म सँभारि ॥२९॥
[दादू] माया मगन जु ह्वै रहे, हम से जीव अपार।
माया माहैं ले रही, डूबे काली धार[5] ॥३०॥

॥ सवैया ॥

[दादू] बिषै के कारणे रूप राते रहैं,
नैन नापाक यौँ कीन्ह भाई।
बदी की बात सुणत सारा दिन,
स्रवन नापाक यौँ कीन्ह जाई ॥

१ शुद्ध। २ डंकिनी। ३ अँगड़स रहे, फँस रहे। ४ अक्षर। ५ काल की धारा मैँ।

स्वाद के कारणे लुब्धि लागी रहै,
जिभ्या नापाक यौं कीन्ह खाई ।
भोग के कारणे भूख लागी रहै,
अंग नापाक यौं कीन्ह लाई ॥ ३१ ॥

दादू नगरी चैन तब, जब इक-राजी[1] होइ ।
दोइ-राजी दुख दुंद मैं, सुखी न बैसै कोइ ॥३२॥

इक-राजी आनंद है, नगरी निहचल बास ।
राजा परजा सुखि बसैं, दादू जोति प्रकास ॥३३॥

जैसैं कुंजर काम बस, आप बँधाणा आइ ।
ऐसैं दादू हम भये, क्यौंकरि निकस्या जाइ ॥३४॥

जैसैं मरकट जीभ रस, आप बँधाणा अंध ।
ऐसैं दादू हम भये, क्यौंकरि छूटै फंध ॥३५॥

ज्यौं सूवा सुख कारणे, बंध्या मूरख माहिं ।
ऐसैं दादू हम भये, क्यौंही निकसैं नाहिं ॥३६॥

जैसैं अंध अज्ञान गृह, बंध्या मूरख स्वादि ।
ऐसैं दादू हम भये, जन्म गँवाया बादि ॥३७॥

[दादू] बूड़ि रह्या रे बापुरे, माया गृह के कूप ।
मोह्या कनक अरु कामिनी, नाना बिधि के रूप ॥३८॥

[दादू] स्वाद लागि संसार सब, देखत परलै जाइ ।
इंद्री स्वारथ साच तजि, सबै बँधाणे आइ ॥३९॥

बिष सुख माहैं रमि रह्या, माया हित चित लाइ ।
सोई संत जन ऊबरे, स्वाद छाड़ि गुण गाइ ॥४०॥

दादू झूठी काया झूठ घर, झूठा यह परिवार ।
झूठी माया देखि करि, फूल्यौ कहा गँवार ॥४१॥

---

१ एकही का राज ।

॥ कवित्त ॥

[दादू] झूठा संसार, झूठा परिवार,
झूठा घर बार, झूठा नर नारि, तहाँ मन माने ।
झूठा कुल जाति, झूठा पित मात,
झूठा बंध भ्रात, झूठा तन गात, सति करि जाने ॥
झूठा सब धंध, झूठा सब फंध,
झूठा सब अंध, झूठा जा चंद, कहा मधु छाने ।
दादू भागि, झूठ सब त्यागि,
जागि रे जागि, देखि दिवाने ॥ ४२ ॥

दादू झूठे तन के कारणे, कीये बहुत बिकार ।
गृह दारा धन संपदा, पूत कुटुँब परिवार ॥ ४३ ॥

ता कारण हति आतमा, झूठ कपट अहंकार ।
सो माटी मिलि जाइगा, बिसर्या सिरजनहार ॥४४॥

[दादू] जन्म गया सब देखताँ, झूठों के सँग लागि ।
साचे प्रीतम कौं मिलै, भागि सकै तो भागि ॥४५॥

॥ छंद ॥

[दादू] गतं[१] गृहं, गतं धनं, गतं दारा सुत जोबनं ।
गतं माता, गतं पिता, गतं बंधु सज्जनं ॥
गतं आपा, गतं परा, गतं संसार कत रंजनं ।
भजसि भजसि रे मन, परब्रह्म निरंजनं ॥ ४६ ॥

जीवैं माहैं जिव रहै, ऐसा माया मोह ।
साईं सूधा सब गया, दादू नहिं अंदोह[२] ॥४७॥

---

१ गया । २ फ़ारसी शब्द 'अंदोह' का अर्थ ग़म, शोक होता है; हिन्दी में मंदेह = अंदेशा ।

माया मगहर[1] खेत खर, सद् गति कदे न होइ।
जे बंचैं ते देवता, राम सरीखे सोइ ॥४८[1]॥

कालरि[2] खेत न नीपजै, जे बाहै[3] सौ बार।
दादू हाना बीज का, क्या पचि मरै गँवार ॥४९॥

दादू इस संसार सौं, निमख न कीजै नेह।
जामण मरण आवटणा[4], छिन छिन दाझै देह ॥५०॥

दादू मोह संसार कौं, बिहरै[5] तन मन प्राण।
दादू छूटै ज्ञान करि, को साधू संत सुजाण ॥५१॥

मन हस्ती माया हस्तिनी, सघन बन संसार।
ता मैं निर्भय ह्वै रह्या, दादू मुग्ध गँवार ॥५२॥

[दादू] काम कठिन घटि चोर है, घर फोड़ै दिन रात।
सोवत साह न जागई, तत्त बस्त ले जात ॥५३॥

काम कठिन घटि चोर है, मूसै भरे भँडार।
सोवत ही ले जाइगा, चेतनि पहरे चार ॥५४॥

ज्यौं घुन लागै काठ कौं, लोहे लागै काट[6]।
काम किया घट जाजरा[7], दादू बारह बाट ॥५५॥

राहु गिलै[8] ज्यौं चंद कौं, गहण गिलै ज्यौं सूर।
कर्म गिलै यौं जीव कौं, नखसिख लागै पूर ॥५६॥

[दादू] चंद गिलै जब राहु कौं, गहण गिलै जब सूर।
जीव गिलै जब कर्म कौं, राम रह्या भरपूर ॥५७॥

---

१ काशी के गंगा पार के खेतौं को मगहर भूमि कहते हैं और कहावत है कि वहाँ मरने से गधे का जन्म मिलता है सो दादू साहिब ने माया की उपमा उसी भूमि से दी है, अर्थात दोनौं दुर्गति की दाता हैं। २ ऊसर ३ जोतै। ४ जन्म मरन की तपन। ५ फूट जाना। ६ मोरचा। ७ जरजर, निबल। ८ ग्रसै।

कर्म कुहाड़ा[1] अंग बन , काटत बारम्बार ।
अपने हाथौं आप कौं , काटत है संसार ॥५८॥
आपै मारै आप कौं , यहु जीव बिचारा ।
साहिब राखणहार है , सो हितू हमारा ॥५९॥
आपै मारै आप कौं , आप आप कौं खाइ ।
आपै अपणा काल है , दादू कहि समझाइ ॥६०॥
मरिबे को सब ऊपजे , जीबे की कुछ नाहिं ।
जीबे की जाणै नहीं , मरिबे को मन माहिं ॥६१॥
बंध्या बहुत बिकार सौं , सर्ब पाप का मूल ।
ढाहै सब आकार कौं , दादू यहु अस्थूल ॥६२॥
[दादू] यहु तौ दोजग[2] देखिये , काम क्रोध अहंकार ।
राति दिवस जरिबौ करै , आपा अगिनि बिकार ॥६३॥
बिषै हलाहल खाइ करि , सब जग मरि मरि जाइ ।
दादू मुहरा[3] नाँव ले , रिदे राखि ल्यौ लाइ ॥६४॥
जेती बिषया बिलसिये , तेती हत्या होइ ।
प्रत्तषि[4] माणस[5] मारिये , सकल सिरोमणि सोइ ॥६५॥
बिषया का रस मद भया , नर नारी का मास ।
माया माते मद पिया , किया जन्म का नास ॥६६॥
[दादू] भावै साकत[6] भगत है , बिषै हलाहल खाइ ।
तहँ जन तेरा राम जी , सुपिनै कदे न जाइ ॥६७॥
खाड़ाबूजो भगति है , लोहर-वाड़ा माहिं ।
परगट पेड़ाइत बसैं , तहँ संत काहे कौं जाहिं ॥६८[7]॥

१ कुल्हाड़ा । २ नर्क । ३ ज़हर मुहरा । ४ प्रत्यक्ष । ५ मन । ६ निगुरा ।
७ खाड़ाबूजी = गढ़े मैं छिपाई हुई अर्थात धोखे या कपट की । लोहरवाड़ा = चोरों को एक बस्ती का नाम । पेड़ाइत = पीड़ा देने वाले या दुष्टप्राणी । दादू दयाल न कपट भक्ति की उपमा इस चोर बस्ती से दी है जिस के निकट संत सुपन मैं भी नहीं जाते अर्थात कपट की भक्ति से संतों को घृणा है ।

सांँपणि इक सब जीव कौं, आगे पीछे खाइ ।
दादू कहि उपगार करि, कोइ जन ऊबरि जाइ ॥ ६९ ॥

दादू खाये साँपणी, क्यौं करि जीवैं लोग ।
राम मंत्र जन[1] गारड़ो[2], जीवैं यहि संजोग ॥ ७० ॥

[दादू] माया कारण जग मरै, पिव के कारणि कोइ ।
देखौ ज्यौं जग परजलै, निमख न न्यारा होइ ॥ ७१ ॥

काल कनक अरु कामिनी, परिहरि इन का संग ।
दादू सब जग जलि मुवा, ज्यौं दीपक जोति पतंग ॥ ७२ ॥

[दादू] जहाँ कनक अरु कामिनि, तहँ जीव पतंगे जाहिं ।
आगि अनँत सूझै नहीं, जलि जलि मूए माहिं ॥ ७३ ॥

घट माहैं माया घणी, बाहरि त्यागी होइ ।
फाटी कंथा[3] पहरि करि, चिहन[4] करै सब कोइ ॥ ७४ ॥

काया राखै बंद दे, मन दह दिसि खेलै ।
दादू कनक अरु कामिनी, माया नहिं मेलै ॥ ७५ ॥

दादू मन सौं मीठी मुख सौं खारी ।
माया त्यागी कहैं बजारी ॥ ७६ ॥

माया मंदिर मीच का, ता मैं पैठा धाइ ।
अंध भया सूझै नहीं, साध कहैं समझाइ ॥ ७७ ॥

दादू केते जलि मुए, इस जोगी की आगि ।
दादू दूरै बंचिये, जोगी के सँग लागि ॥ ७८ ॥

ज्यौं जल मैंणी[5] मंछली, तैसा यहु संसार ।
माया माते जीव सब, दादू मरत न बार ॥ ७९ ॥

---

१ एक लिपि में "जन" की जगह "गुरु" है । २ साँप का विष झाड़ने वाला । ३ गुदड़ी । ४ चैन । ५ भीतर ।

[दादू] माया फोड़ै नैन दोइ, राम न सूझै काल।
साध पुकारै मेर[1] चढ़ि, देखि अगिनी की झाल ॥८०॥

बिना भुवंगम हम डसे, बिन जल डूबे जाइ।
बिनहीं पावक ज्यौं जले, दादू कुछ न बसाइ ॥ ८१ ॥

[दादू] अमृत रूपी आप है, और सबै बिष झाल।
राखणहारा राम है, दादू दूजा काल ॥८२॥

बाजी चिहर[2] रचाइ करि, रह्या अपरछन[3] होइ।
मया पट पड़दा दिया, ता थैं लखै न कोइ ॥८३॥

दादू बाहे देखताँ, ढिग ही ढोरी लाइ।
पिव पिव करते सब गये, आपा दे न दिखाइ ॥ ८४[4] ॥

मैं चाहूँ सो ना मिलै, साहिब का दीदार।
दादू बाजी बहुत है, नाना रंग अपार ॥८५॥

हम चाहैं सो ना मिलै, औ बहुतेरा आहि।
दादू मन मानै नहीं, केता आवै जाहि ॥८६॥

बाजो मोहे जीव सब, हम कौं भुरकी बाहि[5]।
दादू कैसी करि गया, आपण रह्या छिपाइ ॥८७॥

दादू साईं सत्ति है, दूजा भर्म बिकार।
नाँव निरंजन निर्मला, दूजा घोर अँधार ॥८८॥

दादू सो धन लीजिये, जे तुम्ह सेती होइ।
माया बाँधे केई मुए, पूरा पड़्या न कोइ ॥८९॥

[दादू कहै] जे हम छाड़ैं हाथ थैं, सो तुम लिया पसारि।
जे हम लेवैं प्रीति सौं, सो तुम दीया डारि ॥९०॥

---

१ पहाड़। २ बिचित्र। ३ गुप्त। ४ ईश्वर ने जीवों के ढिग (साथ) ढोरी (चाह) लगाकर उन को जगत में बाहि (भरमा) रक्खा है--पं० चं० प्र०। ५ मंत्र डाला।

[दादू] हीरा पग सौं ठेलि करि, कंकर कौं कर लीन्ह ।
पारब्रह्म कौं छाड़ि करि, जीवन सौं हित कीन्ह ॥९१॥
[दादू] सब को बणिजै खार-खलि[1] , हीरा कोई न लेइ ।
हीरा लेगा जौहरी, जो माँगै सो देइ ॥ ९२ ॥
दड़ी[2] दोट[3] ज्यौं मारिये, तिहूँ लोक मैं फेर ।
धुर पहुँचे संतोष है, दादू चढ़िबा मेर[4] ॥ ९३ ॥
अनलपंखि[5] आकाश कौं, माया मेर[6] उलंघि ।
दादू उलटे पंथ चढ़ि, जाइ बिलम्बे अंगि ॥ ९४ ॥
[दादू]माया आगैं जीव सब, ठाढ़े रहे कर जोड़ि ।
जिन सिरजे[7] जल बुंद सौं, ता सौं बैठे तोड़ि ॥ ९५ ॥
सुर नर मुनियर बसि किये, ब्रह्मा बिसुन महेस ।
सकल लोक के सिर खड़ी, साधू के पग हेठ ॥ ९६ ॥
[दादू] माया चेरी संत की , दासी उस दरबार ।
ठकुराणी सब जगत की , तीन्यूँ लोक मँझार ॥ ९७ ॥
[दादू] माया दासी संत की , साकत की सिरताज ।
साकत सेती भाँडणो[8] , संतौं सेती लाज ॥ ९८ ॥
चारिपदारथमुक्ति बापुरी , अठ सिधि नौ निधि चेरी ।
माया दासी ता के आगैं , जहँ भक्ति निरंजन तेरी ॥९९॥
[दादू कहै] ज्यौं आवै त्यौं जाइ बिचारी ।
बिलसी बितड़ी नैं माथैं मारी[9] ॥ १०० ॥
[दादू] माया सब गहले[10] किये , चौरासी लख जीव ।
ता का चेरी क्या करै , जे रँग राते पीव ॥ १०१ ॥

---

१ संसार खारी और फोक चीज़ैं अर्थात कूड़ा करकट का गाहक है । २ गेंद ३ चोट । ४ मेरु = पहाड़ । ५ अलल पच्छ या सारदूल चिड़िया जो आकाश ही में रहता है । ६ रचा ७ निलज्ज । ८ संतौं ने माया को आप यथार्थ रीति से विलसा, औरौं को बाँटा (बितड़ी) और (न) फिर धक्का मार कर निकाल दिया । ९ पागल

[दादू] माया बैरिणि जीव की, जिनि को लावै प्रीति।
माया देखै नरक करि[1], यहु संतत की रीति॥ १०२॥

माया मति चकचाल करि[2], चंचल कीये जीव।
माया माते मद पिया, दादू बिसर्या पीव॥ १०३॥

जणे जणे की रामकी[3], घर घर को नारी।
पतिब्रता नहिं पीव की, सो माथैं मारी॥ १०४॥

जण जण के उठि पीछैं लागै, घर घर भरमत डोलै।
ता थैं दादू खाइ तमाचे, मंदल दुहु मुख बोलै[4]॥ १०५॥

जे नर कामिनि परिहरैं, ते छूटैं गर्भ-बास।
दादू ऊँधे[5] मुख नहीं, रहैं निरंजन पास॥ १०६॥

रोक न राखै झूठ न भाखै, दादू खरचै खाइ।
नदी पूर परबाह ज्यूँ, माया आवै जाइ॥ १०७॥

सदिका सिरजनहार का, केता आवै जाइ।
दादू धन संचै नहीं, बैठ खुलावै खाइ॥ १०८॥

जोगणि ह्वै जोगी गहे, सोफणि[6] ह्वै करि सेस।
भगतणि ह्वै भगता गहे, करि करि नाना भेस॥ १०९॥

बुधि बमेक बल हरणी, त्रय तन ताप उपावनी।
अंग अगिनि परजालिनी, जिव घर बारि नचावनी॥११०॥

नाना बिधि के रूप धरि, सब बंधे भामिनी।
जग बिटंब[7] परलै किया, हरि नाम भुलावनी॥ १११॥

---

१ नर्क समान। २ मत को भरमा कर। ३ फ़ारसी में राम चेरे को कहते हैं, रामक = क्षुद्र चेरा, "रामकी" क्षुद्र चेरी। ४ ढोलक जो दो मुँह से बोलती है और इस लिये तमाचा (चटकना) खाती है। ५ गर्भ में बच्चा औंधे मुँह रहता है। ६ नागिन। ७ पसारा, ढकोसला।

बाजीगर की पूतरीं , ज्यूँ मरकट मोह्या ।
दादू माया राम की , सब जगत बिगोया ॥११२॥
मोरा मोरी देखि करि , नाचै पंख पसारि ।
यौं दादू घर आँगणै , हम नाचे कै बारि[1] ॥११३॥
[दादू] जिस घट दीपक राम का , तिस घट तिमर न होइ
[४-१९६]
उस उजियारे जोति के , सब जग देखै सोइ ॥११४॥
[दादू] जेहि घट ब्रह्म न परगटै , तहँ माया मंगल गाइ ।
दादू जागै जोति जब , तब माया भरम बिलाइ ॥११५॥
[दादू] जोती चमकै तिरवरै[2] , दीपक देखै लोइ ।
चंद सूर का चाँदणा , पगार[3] छलावा होइ ॥११६॥
दादू दीपक देह का , माया परगट होइ ।
चौरासी लख पंखिया , तहाँ परै सब कोइ ॥११७॥
यहु घट दीपक साध का , ब्रह्म जोति परकास ।
दादू पंखी संत जन , तहाँ परै निज दास ॥११८॥
दादू मन मिरतक भया , इंद्री अपणै हाथ ।
तौ भी कदे न कीजिये , कनक कामिनी साथ ॥११९॥
जाणै बूझै जीव सब , त्रिया पुरुष का अंग ।
आपा पर भूला नहीं , दादू कैसा संग ॥१२०॥
माया के घट साजि द्वै , त्रिया पुरुष धरि नाँउ ।
दून्यूँ सुन्दर खेलैं दादू , राखि लेहु बलि जाँउ ॥१२१॥
बहण बीर करि देखिये , नारी अरु भर्तार ।
परमेसुर के पेट के , दादू सब परिार ॥१२२॥

---

१ कई बार । २ झिलमिलाय । ३ पगार के ठीक अर्थ गुजराती भाषा में "तनख़ाह" के हैँ परंतु यहाँ "चमक" से मतलब है । "पगार छलावा" का अभिप्राय भूतों की लुकारी या शहाबा से है जिस में झूठा प्रकाश दीख पड़ता है ।

पर घर परिहरि आपणी , सब एकै उणहार[1] ।
पसु प्राणी समझै नहीं , दादू मुग्ध गँवार ॥१२३॥
पुरिष पलटि बेटा भया , नारी माता होइ ।
दादू को[2] समझै नहीं , बड़ा अचंभा मोहिं ॥१२४॥
माता नारी पुरिष की , पुरिष नारि का पूत ।
दादू ज्ञान बिचारि करि , छाडि गये अवधूत ॥१२५॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस लौं , सुर नर उरझाया ।
बिष का अमृत नाँव धरि , सब किनहूँ खाया ॥१२६॥
[दादू] माया का जल पीवताँ , ब्याधी होइ बिकार ।
सेझे[3] का जल पीवताँ , प्राण सुखी सुध सार ॥१२७॥
जिव गहिला जिव बावला , जीव दिवाना होइ ।
दादू अमृत छाड़ि करि , बिष पीवै सब कोइ ॥१२८॥
माया मैली गुणमई , धरि धरि उज्जल नाँव ।
दादू मोहै सबन कूँ , सुर नर सब ही ठाँव ॥१२९॥
बिष का अमृत नाँव धरि , सब कोई खावै ।
दादू खारा ना कहै , यहु अचिरज आवै ॥१३०॥
[दादू] जे बिष जारै खाइ करि , जिन मुख मैं मेलै ।
आदि अंत परलय गये , जे बिष सूँ खेलै ॥१३१॥
जिन बिष खाया ते मुए , क्या मेरा क्या तेरा ।
आगि पराई आपणी , सब करै निबेरा ॥ १३२ ॥
[दादू कहै] जिनि बिष पीवै बावरे, दिन दिन बाढ़ै रोग ।
देखत ही मरि जायगा , तजि बिषया रस भोग ॥१३३॥

---

१ सदृश, रूप । २ कोई । ३ स्रोत ।

अपणा पराया खाइ विष, देखत ही मरि जाय।
दादू को जीवै नहीं, इहिं भोरैं[1] जिनि खाइ ॥१३४॥
ब्रह्म सरीखा होइ करि, माया सूँ खेलै।
दादू दिन दिन देखताँ, अपणा गुण मेलै[2] ॥१३५॥
माया मारै लात सूँ, हरि कूँ घालै हाथ।
संग तजै सब झूठ का, गहै साच का साथ ॥१३६॥
घर के मारे बन के मारे, मारे स्वर्ग पयाल।
सूषिम मोटा गूँथि करि, माँड्या माया जाल ॥१३७॥
ऊभा[3] सारं बैठ बिचारं, संभारं जागत सूता।
तीन लोक तत जाल बिडारं, तहाँ जाइगा पूता[4] ॥१३८॥
मुए सरीखे ह्वै रहे, जीवण की क्या आस।
दादू राम बिसारि करि, बाँछै[5] भोग बिलास ॥१३९॥
माया रूपी राम कूँ, सब कोई ध्यावै।
अलख आदि अनादि है, सो दादू गावै ॥ १४० ॥
ब्रह्मा का बेद बिस्नु की मूरति, पूजै सब संसारा।
महादेव की सेवा लागै, कहँ है सिरजनहारा ॥१४१॥
माया का ठाकुर किया, माया को महिमाइ।
ऐसे देव अनंत करि, सब जग पूजन जाइ ॥१४२॥
माया बैठी राम ह्वै, कहै मैं हो मोहन राइ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस लौं, जोनी आवै जाइ ॥१४३॥
माया बैठी राम ह्वै, ता कूँ लखै न कोइ।
सब जग मानै सत्त करि, बड़ा अचंभा मोहिं ॥१४४॥
अंजन किया निरंजना, गुण निर्गुण जानै।
धर्या दिखावै अधर करि, कैसैं मन मानै ॥१४५॥

---

१ भूले से। २ त्यागै। ३ खड़ा। ४ पवित्र। ५ माँगै।

निरंजन की बात कहि, आवै अंजन माहिँ।
दादू मन मानै नहीं, सर्ग रसातल जाहिँ ॥१४६॥

दादू कथणी और कुछ, करणो करै कुछ और।
तिन थैं मेरा जिव डरै, जिन के ठीक न ठौर ॥१४७॥

कामधेनु के पटतरे[1], करै काठ की गाइ।
दादू दूध दूझै नहीं, मूरखि देहि वहाइ ॥१४८॥

चिंतामणि[2] कंकर किया, माँगै कछू न देइ।
दादू कंकर डारि दे, चिंतामणि कर लेइ ॥१४९॥

पारस किया पषान का, कंचन कदे[3] न होइ।
दादू आतम राम बिन, भूलि पड़्या सब कोइ ॥१५

सूरिज फटिक पषाण का, ता सूँ तिमर न जाइ।
साचा सूरिज परगटै, दादू तिमर नसाइ ॥१५१॥

मूरति घड़ी[4] पषाण की, कीया सिरजनहार।
दादू साच सूझै नहीं, यूँ डूबा संसार ॥१५२॥

पुरिष बिदेस कामिणि किया, उसही के उणहारि[5]।
कारज को सीझै नहीं, दादू माथैं मारि ॥१५३॥

कागद का माणस किया, छत्रपती सिर मौर।
राज पाट साधै नहीं, दादू परिहरि और ॥१५४॥

सकल भवन भानै घड़ै, चतुर चलावणहार।
दादू सो सूझै नहीं, जिस का वार न पार ॥१५५

---

१ बराबर। २ एक मणि जो मुँह माँगा पदार्थ देती है। ३ कभी। ४ गढ़
५ यदि स्त्री परदेस गये हुए पुरुष के सरीखी मूरत बनाकर रक्खे तो उस
कोई काम नहीँ निकल सकता।

[दादू] पहिली आप उपाइ करि, न्यारा पद निर्बाण ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस मिलि, बंध्या सकल बँधाण[1] ॥ १५६ ॥

नाँव नीति अनीति सब, पहिली बाँधे बंध ।
पसू न जाणै पारधी[2], दादू रोपै फंध ॥ १५७ ॥

दादू बाँधे बेद बिधि, भरम करम उरझाइ ।
मरजादा माहैं रहै, सुमिरण किया न जाइ ॥ १५८ ॥

[दादू] माया मीठी बोलणी, नै नै[3] लागै पाँइ ।
दादू पैसै पेट मैं, काढ़ि कलेजा खाइ ॥ १५९ ॥

नारी नागणि जे डसे, ते नर मुए निदान ।
दादू को जीवै नहीं, पूछौ सबै सयान ॥ १६० ॥

नारी नागणि एक सी, बाघणि बड़ी बलाइ ।
दादू जे नर रस भये, तिन का सरबस खाइ ॥ १६१ ॥

नारी नैन न देखिये, मुख सूँ नाँव न लेइ ।
कानौं कामणि जिनि सुणै, यहु मण जाण न देइ ॥ १६२ ॥

सुंदरि खाये साँपणी, केते यहि कलि माहिं ।
आदि अंत इन सब डसे, दादू चेतै नाहिं ॥ १६३

दादू पैसै पेट मैं, नारी नागणि होइ ।
दादू प्राणी सब डसे, काढ़ि सकै ना कोइ ॥ १६४ ॥

माया साँपणि सब डसै, कनक कामणी होइ ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस लौं, दादू बचै न कोइ ॥ १६५ ॥

---

१ निरंजन जोत (काल और माया) ने ब्रह्मा, विश्नु, महेश, को पैदा किया और फिर निरंजन न्यारे होकर निरवान पद मैं सतपुरुष के ध्यान में लग गये और तीनोँ देवता और माया ने मिलकर सब रचना त्रिलोकी की करी और सब प्रकार के बंधन जीव को अपनी अमलदारी से बाहर न जा सकने के निमित्त फैलाये। २ शिकारी। ३ झुक झुक कर।

माया मारै जीव सब , खंड खंड करि खाइ ।
दादू घट का नास करि , रोवै जग पतियाइ ॥ १६६॥
बाबा बाबा कहि गिलै[1] , भाई कहि कहि खाइ ।
पूत पूत कहि पी गई , पुरिषा जिन पतियाइ ॥१६७॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस की , नारी माता होइ ।
दादू खाये जीव सब , जिनि रु पतीजै कोइ ॥१६८॥
माया बहुरूपी नटणी नाचै, सुर नर मुनि कूँ मोहै ।
ब्रह्मा बिस्नु महादेव बाहै[2] , दादू बपुरा को है ॥ १६९ ॥
माया पासी[3] हाथि लै , बैठी गोप छिपाइ ।
जे कोइ धीजै प्राणियाँ , ताही के गलि बाहि ॥ १७० ॥
पुरिषा पासी हाथि करि , कामणि के गल बाहि ।
कामणि कटारी कर गहै , मारि पुरिष कूँ खाइ ॥ १७१ ॥
नारी बैरणि पुरिष की , पुरिषा बैरी नारि ।
अंति कालि दून्यूँ मुए , दादू देखि बिचारि ॥ १७२ ॥
नारी पुरिष कूँ ले मुई , पुरिषा नारी साथ ।
दादू दून्यूँ पचि मुए , कछू न आया हाथ ॥ १७३ ॥
भँवरा लुबधो बास का , कँवल बँधाना आइ ।
दिन दस माहैं देखताँ , दून्यूँ गये बिलाइ ॥ १७४ ॥
नारी पीवै पुरिष कूँ , पुरिष नारी कूँ खाइ ।
दादू गुर के ज्ञान बिन , दून्यूँ गये बिलाइ ॥ १७५ ॥

॥ इति माया को अंग समाप्त ॥ १२ ॥

१३—साच को अंग

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवत: ।
बन्दनं सर्ब साधवा, प्रणामं पारंगत: ॥ १ ॥

॥ निर्दई-मांसाहारी ॥

[दादू] दया जिन्हों के दिल नहीं, बहुरि कहावैं साध ।
जे मुख उन का देखिये, (तौ) लागै बहु अपराध ॥२॥
[दादू] मिहर मुहब्बत मन नहीं, दिल के बज्र कठोर ।
काले काफिर ते कहिय[1], मोमिन[2] मालिक और ॥३॥
[दादू] कोई काहू जीव की, करै आतमा घात ।
साच कहूँ संसा नहीं, सो प्राणी दोजगि[3] जात ॥४॥
[दादू] नाहर सिंह सियाल सब, केते मूसलमान ।
माँस खाइ मोमिन भये, बड़े मियाँ का ज्ञान ॥५॥
[दादू] माँस अहारी जे नरा, ते नर सिंह सियाल ।
बग[4] मंजार[5] सुनहा[6] सही, एता परतषि[7] काल ॥ ६ ॥
[दादू] मुई मार माणस घणे, ते परतषि[7] जम काल ।
मिहर दया नहिं सिंहदिल[8], कूकर काग सियाल ॥ ७ ॥
माँस अहारी मद[9] पिवै, बिषै बिकारी सोइ ।
दादू आतम राम बिन, दया कहाँ थैं होइ ॥ ८ ॥

---

१ कहना चाहिये । २ सच्चे मालिक का ईमान या निश्चय रखने वाले । ३ दोज़ख़ = नर्क । ४ बगुला । ५ बिल्ली । ६ कुत्ता । ७ प्रत्यक्ष । ८ संग दिल = कठोर । ९ शराब ।

लंगर लोग लोभ सूँ लागे, बोलैं सदा उन्हीं की मीर।
जोर जुलम बीच बटपारे, आदि अंत उनहीं सूँ सीर ॥९[1] ॥
तन मन मारि रहे साईं सूँ, तिन कूँ देखि करैं ताजीर।
ये बड़ि बूझि कहाँ थैं पाई, ऐसी कजा औलियापीर ॥१०[2] ॥
बेमिहर गुमराह ग़ाफ़िल, गोश्त खुर्दनी।
बेदिल बदकार आलम, हयात मुर्दनी ॥ ११[3] ॥
छल करि बल करि धाइ करि, मारै जेहि तेहिं फेरि।
दादू ताहि न धीजिये, परणै सगी पतेरि[4] ॥ १२ ॥
[दादू] दुनियाँ सूँ दिल बाँधि करि, बैठे दीन गँवाइ।
नेकी नाँव बिसारि करि, करद कमाया खाइ[5] ॥ १३॥
[दादू] गल काटै कलमा भरै, अया बिचारा दीन।
पाँचो वखत निमाज गुजारै, स्याबित नहीं अकीन ॥१४[6] ॥

---

१ साखी नं० ९—निलज्ज विषई संसारी [लंगर लोग] उन निर्दई बेईमानों का पच्छ [मीर] करते और उन्हीं की सी बोली बोलते हैं, ऐसे लोग अत्याचार और दुष्टता [ज़ोर जुलम] की राह के ठग [बटपार] हैं और यह जीव जनम भर ऐसों ही का साथ [सीर] देता है।

२ साखी नं० १०—जो भक्त जन तन मन को नीचा डाल कर मालिक की सेवा में लगे हैं उन से ऐसे दुर्जन विरोध [ताज़ीर] रखते हैं; न जाने यह अनूठी समझौती [बड़ी बूझि] महात्माओं और सद्उपदेशकों [औलिया पीर] के घात [क़ज़ा] की कहाँ से धारन की।

३ सखी नं० ११—निठुर [बेमिहर] विमुख [गुमराह] अचेत (ग़ाफ़िल) मांस अहारी [गोश्त ख़ुर्दनी] कपटी [बेदिल] कुकर्मी [बदकार], संसार में [आलम] जीते जी मृतक तुल्य [हयात मुर्दनी] है।

४ ऐसे का कभी बिश्वास न करै [धीजिये] वह अपनी सगी बहिन [पतेरि] से ब्याह कर ले (परणै) तो अचरज नहीं।

५ छुरी की कमाई (यानी गोश्त जिस को छुरे से काटते हैं) खाता है।

६ मुसलमान दीन आधीन बकरे (अया) को ज़िबह करने के वक्त कलमा पढ़ते हैं—लेकिन पाँचों वक्त की नमाज़ पढ़ने से क्या होता है जब प्रतीत (यक़ीन) पक्की नहीं है।

दुनियाँ के पीछे पड़्या, दौड़्या दौड़्या जाइ।
दादू जिन पैदा किया, ता साहिब कूँ छिटकाइ ॥१५॥

कुफ़र[1] जे के मन मैं, मीयाँ मूसलमान।
दादू पेया[2] झंग[3] मैं, बिसारे रहमान ॥ १६ ॥

आपस[4] कौं मारै नहीं, पर कौं मारन जाइ।
दादू आपा मारे बिना, कैसे मिलै खुदाइ ॥ १७ ॥

भीतर दुंदर[5] भरि रहे, तिन कौं मारैं नाहिं।
साहिब की अरवाह[6] कौं, ता कौं मारन जाहिं ॥ १८ ॥

[दादू] मूए कौं क्या मारिये, मीयाँ मूई[7] मार।
आपस[8] कौं मारै नहीं, औरौं कौं हुसियार ॥ १९ ॥

॥ साच ॥

जिस का था तिस का हुआ, तौ काहे का दोस।
दादू बंदा बंदगी, मीयाँ ना कर रोस २० ॥

सेवग सिरजनहार का, साहिब का बंदा।
दादू सेवा बंदगी, दूजा क्या धंधा ॥ २१ ॥

॥ काफर यानी असाध की रहनी ॥

॥ चौपाई ९ ॥

सो काफिर जो बोलै काफ। दिल अपणा नहिँ राखै साफ॥
साईँ कैाँ पहिचानै नाहीँ। कूड़ कपट सब उस ही माहीँ॥२॥
साईं का फुरमान न मानै, कहाँ पीव ऐसे करि जानै।
मन आपणे मैँ समझत नाहीँ। निरखत चलै आपणी छाहीँ
॥ २३ ॥

---

१ जिस के मन मैँ संसार को चाह और मालिक की अचाह है। २ पड़ा। ३ झगड़ा। ४ अपनपौ। ५ दुई, भरम, कलह। ६ रूहैँ, जीवैाँ। ७ माया, ममता। ८ हँगता। ९ नीचे की आठ कड़ियाँ और फिर दो दोहोँ के आगे की आठ कड़ियाँ चौपाई की हैँ जिन पर एक ही नंबर होना चाहिये लेकिन जो कि पाँचो लिपियोँ और छापोँ मैँ दोहा की तरह दो दो कड़ियोँ पर नंबर दिये हैँ वही तरीक़ा क़ाइम रक्खा गया।

काया कतेब बोलिये, लिखि राखूँ रहिमान[१]।
मनवाँ मुल्ला बोलिये, सुरता[२] है सुबहान[३] ॥४१॥

[दादू] काया महल में निमाज गुजारूँ, तहँ और
न आवन पावै।
मन मनके[४] करि तसबी[५] फेरूँ, तब साहिब के मन भावै॥४२

दिल दरिया में गुसल[६] हमारा, ऊजू[७] करि चित लाऊँ।
साहिब आगे करूँ बंदगी, बेर बेर बलि जाऊँ ॥४३॥

[दादू] पंचौं संगि सँभालूँ साईं, तन मन तौ सुख पाऊँ
प्रेम पियाला पिवजी देवै, कलमा ये लय लाऊँ ॥४४॥

सोक्षा कारण सब करै, रोजा बंग निमाज।
मुवा न एकै आह सूँ, जे तुझ साहिब सेती काज ॥४५[८]

हर रोज हजूरी होइ रहु, काहे करै कलाप[९]।
मुल्ला तहाँ पुकारिये, जहँ अरस[१०] इलाही आप ॥४६

हर दम हाजिर होणाँ बाबा, जब लग जीवै बंदा।
दाइम[११] दिल साईं सौं साबित, पंच बखत का धंधा ॥४७

[दादू] हिंदू मारग कहैं हमारा, तुरक कहैं रह[१२] मेरी
कहाँ पंथ है कहौ अलह का, तुम तौ ऐसी हेरी ॥४८॥

[दादू] दुई दरोग[१३] लोग कौं भावै, साईं साच पियारा।
कौण पंथ हम चलैं कहौ धौं, साधो करौ बिचारा ॥४९

खंडि खंडि करि ब्रह्म कौं, पखि पखि[१४] लीया बाँटि
दादू पूरण ब्रह्म तजि, बँधे भरम की गाँठि ॥५०

---

१ दयाल पुरुष। २ श्रोता। ३ पवित्र भगवंत। ४ माला के दाने। ५ माला ६ स्नान। ७ निमाज के पहिले मुसलमान हाथ मुँह धोते हैं उसको वज़ू बोलते हैं ८ भाव यह कि रोज़ा, बाँग नमाज़ आदि कार्रवाई ऊपरी दिखावें को करता है परन्तु मालिक के मिलने की विरह नहीं उठाता कि जिस से काम बने। ९ शोक, दुख १० अर्श = नवाँ आसमान। ११ सदा, हमेशा। १२ राह। १३ झूठ। १४ पखड़ी पखड़ी

जीवत दीसै रोगिया, कहैं मूवाँ पीछैं जाइ।
दादू दुँह के पाढ़ मैं, ऐसी दारू लाइ ॥५१[1]॥

सो दारू किस काम की, जा थैं दरद न जाइ।
दादू काटै रोग कौं, सो दारू ले लाइ ॥५२॥

[दादू] अनभै काटै रोग कौं, अनहद उपजै आइ। (४-२०७)
सेझे का जल निर्मला, पीवै रुचि ल्या लाइ ॥५३॥

सोइ अनभै सोइ ऊपजी, सोई सबद तत सार।
सुणताँ ही साहिब मिलै, मन के जाहिं बिकार ॥५४॥

औषद खाइ न पछि रहै, बिषम बयाधि क्यौं जाइ। (१-१५१)
दादू रोगी बावरा, दोस बैद कौं लाइ ॥५५॥

॥ पेटू होने का निषेद ॥

एक सेर का ठाँवड़ा[2], क्यौं ही भर्या न जाइ।
भूख न भागी जीव की, दादू केता खाइ ॥५६॥

पसुवाँ की नाईं भरि भरि खाइ, व्याधि घनेरी बधती[3] जाइ।
राम रसाइन भरि भरि पीवै, दादू जोगी जुग जुग जीवै ॥५७॥

दादू चारै[4] चित दिया, चिंतामणि कौं भूलि।
जन्म अमोलिक जात है, बैठे माँझी फूलि ॥५८॥

भरी अघौड़ी भावठी[5], बैठा पेट फुलाइ।
दादू सूकर स्वान ज्यौं, ज्यौं आवै त्यौं खाइ ॥५९॥

---

१ इस साखी का भावार्थ यह है कि तुम जो अनेक इष्ट देवी देवताओं के बाँध रहे हो और उन से यह आस करते हो कि मुए पीछे मुक्ति हो जायगी यह तुम्हारी भूल है, भला संसार रूपी पहाड़ (पाढ़) का दाह (दुँह) मैं यह छोटी छोटी दवाइयाँ (अर्थात इष्ट) क्या काम दे सकती हैं, इस लिये ऐसी भारी औषधी लेव जैसा कि ५२ वीं साखी मैं लिखा है। २ बरतन। ३ बढ़ती। ४ चारा या पशु तुल्य अहार मैं। ५ कच्चे चमड़े की भट्ठी यानी पेट।

[दादू] खाटा मीठा खाइ करि, स्वादि चित दीया ।
इन मैं जीव बिलंबिया, हरि नाँव न लीया ॥६०॥
भगति न जाणै राम की, इंद्री के आधीन ।
दादू बंध्या स्वाद सौं, ता थैं नाँव न लीन्ह ॥६१
[दादू] अपना नीका राखिये, मैं मेरा दिया बहाइ ।
तुझ अपणे सेती काज है, मैं मेरा भावै तीघर जाइ ॥६२
जे हम जाण्या एक करि, तौ काहे लोक रिसाइ ।
मेरा था सो मैं लिया, लोगौं का क्या जाइ ॥६३
दादू द्वै द्वै पद किये, साखी भी द्वै चारि ।
हम कौं अनभै ऊपजी, हम ज्ञानी संसारि ॥६४
सुनि सुनि पर्चे ज्ञान के, साखी सबदी होइ ।
तब हीं आपा ऊपजे, हम सा और न कोइ ॥६५
सो उपजी किस काम की, जे जण जण करै कलेस ।
साखी सुनि समझै साध की, ज्यौं रसना रस सेस ॥६६
[दादू] पद जोड़ै साखी कहै, बिषै न छाड़ै जीव ।
पानी घालि बिलोइये, तौ क्यौं कर निकसै घीव ॥६७
[दादू] पद जोड़े क्या पाइये, साखी कहे क्या होइ ।
सत्ति सिरोमणि साइयाँ, तत्त न चीन्हा सोइ ॥६८
कहिबे सुणिबे मन खुसी, करिबा औरै खेल ।
बातौं तिमर न भाजई, दीवा बाती तेल ॥६९॥
[दादू] करिबे वाले हम नहीं, कहिबे कूँ हम सूर ।
कहिबा हम थैं निकट है, करिबा हम थैं दूर ॥७०॥
[दादू] कहे कहे का होत है, कहे न सीझै काम ।
कहे कहे का पाइये, जब लग रिदै न आवै राम ॥७१॥

राम कहूँ ते जोड़िबा, राम कहूँ ते साखि।
राम कहूँ ते गाइबा, राम कहूँ ते राखि ॥७२॥
दादू सुरता[1] घरि[2] नहीं, बकता बकै सु बादि।
बकता सुरता एक रस, कथा कहावै आदि ॥७३॥
बकता सुरता घरि नहीं, कहै सुणै को राम।
दादू यहु मन थिर नहीं, बादि बकै बेकाम ॥७४॥
देखा देखी सब चले, पार न पहुँच्या जाइ।
दादू आसण पहल कै, फिरि फिरि बैठे आइ ॥७५॥
(१०-११७)
अंतर सुरझे समझि करि, फिर न अरूझे जाइ।
बाहिर सुरझे देखताँ, बहुरि अरूझे आइ ॥७६॥
आतम लावै आप सौं, साहिब सेती नाहिं।
दादू को[3] निपजै नहीं, दून्यूँ निर्फल जाहिं ॥७७॥
तूँ मुझ कूँ मोटा[4] कहै, हौं तुझे बड़ाई मान।
साईं कूँ समझै नहीं, दादू झूठा ज्ञान ॥७८॥
सदा समीप रहै सँग सनमुख, दादू लखै न गूझ।
सुपनैं ही समझै नहीं, क्यौं करि लहै अबूझ ॥७९॥
[दादू] भगत कहावै आपकूँ, भगति न जांणैं भेव।
सुपनैं ही समझैं नहीं, कहाँ बसैं गुरदेव ॥८०॥ (१-१२९)
[दादू] सेवग नाँव बुलाइये, सेवा सुपिनै नाहिं।
नाँव धराये का भया, जे एक नहीं मन माहिं ॥८१॥
नाँव धरावे दास का, दासातन थैं दूरि।
दादू कारज क्यौं सरै, हरि सौं नहीं हजूरि ॥८२॥

---
१ श्रोता, सुनने वाला। २ एक चित्त। ३ कोई। ४ बड़ा।

भगत न होवै भगति बिन , दासातन बिन दास ।
बिन सेवा सेवग नहीं , दादू झूठी आस ॥८३॥
[दादू] राम भगति भावै नहीं, अपनी भगति का भाव ।
राम भगति मुख सौं कहै , खेलै अपणाँ डाव[१] ॥८४॥
भगति निराली रहि गई , हम भूलि पड़े बन माहिं ।
भगति निरंजन राम की , दादू पावै नाहिं ॥८५॥
सो दसा कतहूँ रही , जिहिं दिसि पहुँचे साध ।
मैं तैं मूरखि गहि रहे , लोभ बड़ाई बाद ॥८६॥
दादू राम बिसारि करि , कीये बहु अपराध ।
लाजौं मारे साध सब , नाँव हमारा साध ॥८७॥
मनसा के पकवान सौं , क्यौं पेट भरावै ।
ज्यौं कहिये त्यौं कीजिये , तब हीं बनि आवै ॥८८॥
[दादू] मिसरी मिसरी कीजिये, मुख मीठा नाहीं ।
मीठा तब हीं होइगा , छिटकावै माहीं ॥८९॥
[दादू] बातौं ही पहुँचै नहीं, घर दूरि पयाना ।
मारग पंथी उठि चलै , दादू सोइ सयाना ॥९०॥
बातौं सब कुछ कीजिये , अंत कछू नहिं देखै ।
मनसा वाचा कर्मना , तब लागै लेखै ॥९१॥
[दादू] कासौं कहि समझाइये, सब को चतुर सुजान ।
कीड़ी कुंजर आदि दै , नाहिन कोई अजान ॥९२॥
[दादू] सूकर स्वान सियाल सिंह, सर्प रहै घट माहिं ।
कुंजर कीड़ी जीव सब , पाँडे जाणैं नाहिं ॥९३॥ (११-९)
[दादू] सूना घट सोधी नहीं, पंडित ब्रह्मा पूत ।
आगम[२] निगम[३] सब कथैं , घर[४] मैं नाचैं भूत[५] ॥९४॥

१ दाव । २ शास्त्र । ३ पुरान आदिक । ४ घट । ५ काम क्रोध आदिक ।

पढ़े न पावै परम गति, पढ़े न लंघै पार।
पढ़े न पहुँचै प्राणिया, दादू पीड़ पुकार ॥९५॥

दादू निबरे[1] नाँव बिन, झूठा कथैं गियान।
बैठे सिर खाली करैं, पंडित बेद पुरान ॥९६॥

[दादू] केते पुस्तक पढ़ि मुए, पंडित बेद पुरान।
केते ब्रह्मा कथि गये, नाहिंन राम समान ॥९७॥

सब हम देख्या सोधि करि, बेद पुरानौं[2] माहिं।
जहाँ निरंजन पाइये, सो देस दूरि इत नाहिं ॥९८॥

पढ़ि पढ़ि थाके पंडिता, किन हुं न पाया पार।
कथि कथि थाके मुनि जना, दादू नाँइ अधार ॥९९॥ (२-८७)

काजी कजा[3] न जानही, कागद हाथि कतेब।
पढ़ताँ पढ़ताँ दिन गये, भीतर नाहीं भेद ॥१००॥

मसि[4] कागद के आसरे, क्यौं छूटै संसार।
राम बिना छूटै नहीं, दादू भर्म बिकार ॥१०१॥

कागद काले करि मुए, केते बेद पुरान।
एकै अष्यर[5] पीव का, दादू पढ़ै सुजान ॥१०२॥

दादू अष्यर प्रेम का, कोइ पढ़ेगा एक। (३-११८)
दादू पुस्तक प्रेम बिन, केते पढ़ैं अनेक ॥१०३॥

दादू पाती प्रेम की, बिरला बाँचै कोइ। (३-११९)
बेद पुरान पुस्तक पढ़े, प्रेम बिना क्या होइ ॥१०४॥

[दादू] कहताँ कहताँ दिन गये, सुणताँ सुणताँ जाइ।
दादू ऐसा को नहीं, कहि सुणि राम समाइ ॥१०५॥

---

१ हीन, कमतर। २ दो पुस्तकों में "कुरानैं" है। ३ शरा का मर्म। ४ सियाही। ५ अक्षर

मौन गहैं ते बावरे, बोलैं खरे अयान ।
सहजैं राते राम सौं, दादू सोई सयान ॥१०६॥
कहताँ सुणताँ दिन गये, ह्वै कछू न आवा ।
दादू हरि की भगति बिन, प्राणी पछितावा ॥१०७॥
दादू कथणी और कुछ, करणी करैं कुछ और ।
तिन थैं मेरा जिव डरै, जिन कै ठीक न ठौर ॥१०८॥
अंतर गति औरै कछू, मुख रसना कुछ और ।
दादू करणी और कुछ, तिन कौं नाहीं ठौर ॥१०९॥
[दादू] राम मिलन की कहत हैं, करते कुछ औरै ।
ऐसे पिव क्यूँ पाइये, समझि मन बौरे ॥११०॥
[दादू] बगनी भंगा खाइ करि, मतवाले माँझी ।
पैका नाहीं गाँठड़ी, पातिसाही खाँजी ॥१११[1]॥
दादू टोटा दालिदी[2], लाखौं का व्योपार ।
पैका नाहीं गाँठड़ी, सिरे[3] साहूकार ॥११२॥
[दादू] ये सब किस के पंथ मैं, धरती अरु असमान ।
पानी पवन दिन राति का, चंद सूर रहिमान ॥११३॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस का, कौन पंथ गुरदेव ।
साईं सिरजनहार तूँ, कहिये अलख अभेव ॥११४॥
महम्मद किस के दीन मैं, जबराइल[4] किस राह ॥
इन के मुर्सद[5] पीर[5] की, कहिये एक अलाह ॥११५॥

नोट—११३ से ११६ तक की साखियों की पहिली कड़ी मैं प्रश्न है और दूसरी मैं उत्तर।

१ अँगेड़ी भाँग खाकर सुध बुध भूल जाते है, पल्ले एक टका नहीं पर डोंग पादशाही ख़ानख़ानाँ की मारते हैं। २ दारिद्री, कंगाल। ३ भारी, औवल दर्जे के। ४ एक प्रधान फ़िरिश्ते का नाम। ५ गुरू।

[दादू] ये सब किसके ह्वै रहे, यहु मेरे मन माहिं ।
अलख इलाही जगत गुर, दूजा कोई नाहिं ॥११६॥

दादू औरैं ही औला तकै, धीयाँ सदै बियंनि ।
सो तूँ मीयाँ ना घुरै, जो मीयाँ मीयंनि ॥११७[1] ॥

आई रोजी ज्यौं गई, साहिब का दीदार ।
गहिला लोगौं कारणे, देखै नहीं गँवार ॥११८[2] ॥

[दादू] सोई सेवग राम का, जिसैं न दूजी चिंत ।
दूजा को भावै नहीं, एक पियारा मिंत ॥११९॥

फल कारनि सेवा करै, जाचै त्रिभुवन राव । (८-९२)
दादू सो सेवग नहीं, खेलै अपणा डाव ॥१२०॥

सहकामी सेवा करै, माँगै मुग्ध गँवार । (८-९३)
दादू ऐसे बहुत हैं, फल के भूचनहार ॥१२१॥

तन मन से लागा रहै, राता सिरजनहार । (८-९४)
दादू कुछ माँगै नहीं, ते बिरला संसार ॥१२२॥

अपनी अपनी जाति सौं, सब को बैसै पाँति ।
दादू सेवग राम का, ताके नहीं भरांति[3] ॥१२३॥

चोर अन्याई मसकरा, सब मिलि बैसैं पाँति ।
दादू सेवग राम का, तिन सौं करैं भरांति ॥१२४॥

---

१ औरों को तो वड़ा (औला) देखता (तकै) या मानता है और सदा दूसरों हा (वियंनि) का वना रहता है (धीयाँ), लेकिन उस मालिक (मीयाँ) को नहीं चाहता जो सव मालिकों का मालिक है । २ इस (मनुष्य) शरीर ही में मौक़ा था कि सच्चे मालिक की भक्ति कर के उस का दीदार पाता परन्तु गँवार ने संसार और कुटुम्बियों की चढ़ती की ख़ातिर इस दुर्लभ औसर को इस तरह से गँवाया जैसे कि खाना परस कर आई हुई थाली सामने से उठ जावे । ३ दुबिधा ।

दादू सूप बजायाँ क्यौं टलै, घर मैं बड़ी बलाइ[1]।
काल झाल इस जीव का, बातन हीं क्यूँ जाय ॥१२५॥
साँप गया सहनाण[2] कूँ, सब मिलि मारै लोक।
दादू ऐसा देखिये, कुल का डगरा फोक[3] ॥१२६॥
दादू दून्यूँ भरम है, हिंदू तुरक गँवार।
जे दुहवाँ थैं रहित है, सो गहि तत्त बिचार ॥१२७॥
अपणाँ अपणाँ करि लिया, भंजन माहैं बाहि।
दादू एकै कूप जल, मन का भरम उठाइ ॥१२८॥
[दादू] पानी के बहु नाँव धरि, नाना बिधि की जाति।
बोलनहारा कौन है, कहौ धौं कहाँ समाति ॥१२९॥
जब पूरन ब्रह्म बिचारिये, तब सकल आतमा एक।
काया के गुन देखिये, तौ नाना बरण अनेक ॥१३०॥
[दादू] लीला राजा राम की, खेलैं सब हीं संत।
आपा पर एकै भया, छूटी सबै भरंत ॥१३१[4]॥
अपणाँ पराया खाइ बिष, देखत ही मरि जाइ। (१२-१३२)
दादू को जीवै नहीं, यहिं भोरै[5] जिनि खाइ ॥१३२॥
[दादू] भावै साकत भगत ह्वै, बिषै हलाहल खाइ। (१२-६७)
तहँ जन तेरा रामजी, सुपनै कदे न जाइ ॥१३३॥

॥ अमिट पाप प्रचंड ॥

भाव भगति उपजै नहीं, साहिब का परसंग।
बिषै बिकार छूटै नहीं, सो कैसा सतसंग ॥१३४॥

---

१ दीवाली के दूसरे दिन घर से बालाय निकालने के निमित्त सूप बजाते हैं परंतु घट की खोट अर्थात् इंद्रियों के बिकार ऐसी तुच्छ जुगतों से नहीं जाते। २ लीक। ३ थोथा। ४ कहते हैं कि टौंक में एक भारी उत्सव था वहाँ भोजन सामग्री भीड़ के लिये कम थी परंतु दादू दयाल के भोग लगाने पर वह सामग्री अटूट हो गई। इस का भेद दयाल जी के एक शिष्य ने पूछा जिसके जवाब में यह साखी दादू साहिब ने कही–पं० चं० प्र०। ५ भूल से।

बासन बिषै बिकार के, तिन कूँ आदर मान ।
संगी सिरजनहार के, तिन सूँ गर्व गुमान ॥१३५॥
अंधे कूँ दीपक दिया, तौ भी तिमर न जाइ ।
सोधी नहीं सरीर की, तासनि का समझाइ ॥१३६॥
[दादू] कहिये कुछ उपगार कौं, मानैं औगुण दोष ।
अंधे कूप बलाइया, सत्ति न मानैं लोक ॥१३७॥
कालरि खेत न नीपजै, जे बाहै सौ बार । (१२-४९)
दादू हाना बीज का, क्या पचि मरै गँवार ॥१३८॥
[दादू] जिन कंकर पत्थर सेविया, सो अपना मूल गँवाइ ।
अलख देव अंतरि बसै, क्या दूजी जागह जाइ ॥१३९॥
पत्थर पीवैं धोइ करि, पत्थर पूजैं प्राण ।
अन्ति काल पत्थर भये, बहु बूड़े यहि ज्ञान ॥१४०॥
कंकर बाँध्या गाँठड़ी, हीरे के बेसास ।
अंति काल हरि जौहरी, दादू सूत कपास ॥१४१॥
[दादू] पहिली पूजे ढूँढसो, अब भी ढूँढस बाणि[1] ।
आगे ढूँढस होइगा, दादू सति करि जाणि ॥१४२॥

॥ चितावनी ॥

दादू पैंडे पाप के, कदे न दीजै पाँव ।
जिहिं पैंडे मेरा पिव मिलै, तिहिं पैंडे का चाव ॥१४३॥
[दादू] सुकिरत मारग चालताँ, बुरा न कबहूँ होइ ।
अमृत खाताँ प्राणियाँ, मुवा न सुनिये कोइ ॥१४४॥

॥ भरम ॥

कुछ नाहीं का नाँव क्या, जे धरिये सो झूठ ।
सुर नर मुनि जन बंधिया, लोका आवट कूट[2] ॥१४५॥

---

१ आदत । २ कूटा पीसी, जनम मरन ।

क्यूँ सब जोनी जगत मैं, घर बार नचाया ।
क्यूँ यहु करता जीव है, पर हाथि बिकाया ॥१६९॥
दादू कृत्तम काल बसि, बंध्या गुण माहीं ।
उपजे बिनसै देखताँ, यहु करता नाहीं ॥१७०॥
एक साध सौं गहि गही, जीवन मरन निबाहि ।
दादू दुखिया राम बिन, भावै तीर्थरि जाहि ॥१७१॥
[दादू] भावै तहाँ छिपाइये, साच न छाना होइ । (२-११०)
सेस रसातल गगन धू, परगट कहिये सोइ ॥१७२॥
[दादू] छानै छानै कीजिये, चौड़ैं परगट होइ ।
दादू पैसि पयाल मैं, बुरा करै जिनि कोइ ॥१७३॥
अनकीया लागै नहीं, कीया लागै आइ ।
साहिब के दरि न्याव है, जे कुछ राम रजाइ[१] ॥१७४॥
सोइ जन साधू सिद्ध सो, सोइ सतबादी सूर ।
सोइ मुनियर दादू बड़े, सनमुख रहणि हजूर ॥१७५॥
सोइ जन साचे सोइ सती, सोइ साधक सूजान ।
सोइ ज्ञानी सोइ पंडिता, जे राते भगवान ॥१७६॥
[दादू] सोइ जोगी सोइ जंगमा, सोइ सोफी सोइ सेख ।
सोइ सन्यासी सेवड़े, दादू एक अलेख ॥१७७॥
सोइ काजी मुल्ला सोई, सोइ मोमिन मुसलमान ।
सोई सयाने सब भले, जे राते रहिमान ॥१७८॥
राम नाम कूँ बणिजन बैठे, ता थैं माँड्या हाट ।
साईं सौं सौदा करैं, दादू खोलि कपाट ॥१७९॥
बिच के[२] सिर खाली करैं, पूरे सुख संतोष ।
दादू सुध बुध आतमा, ताहि न दीजै दोष ॥१८०॥

---

१ रजा = मर्जी, इच्छा । २ बीच के धूमर्थात अरे ।

सुध बुध सूँ सुख पाइये, कै साध बमेकी[१] होइ।
दादू ये बिच के बुरे, दाधे रीगे[२] सोइ ॥१८१॥

जिनि कोई हरि नाँव मैं, हम कूँ हाना बाहि[३]।
ता थैं तुम थैं डरत हौं, क्यूँ ही टलै बलाइ ॥१८२॥

जे हम छाड़ैं राम कूँ, तौ कौन गहैगा।
दादू हम नहिं उच्चरैं[४], तौ कौन कहैगा ॥१८३॥

एक राम छाड़ै नहीं, छाड़ै सकल बिकार।
दादू सहजैं होइ सब, दादू का मत सार ॥१८४॥

जे तूँ चाहै राम कूँ, तौ एक मना[५] आराध।
दादू दूजा दूरि करि, मन इंद्री कर साध ॥१८५॥

कबीर बिचारा कहि गया, बहुत भाँति समझाइ।
दादू दुनियाँ बावरी, ता के संगि न जाइ ॥१८६॥

पावैंगे उस ठौर को, लंघैंगे यहु घाट।
दादू क्या कहि बोलिये, अजहूँ बिच ही बाट ॥१८७॥

साचा राता साच सूँ, झूठा राता झूठ।
दादू न्याव नबेरिये[६], सब साधौं कूँ पूछ ॥१८८॥

॥ सच्चे साध संत के मत की एकता ॥

जे पहुँचे ते कहि गये, तिनकी एकै बाति।
सबै सयाने एक मति, उनकी एकै जाति ॥१८९॥

जे पहुँचे ते[७] पूछिये, तिन की एकै बात।
सब साधौं का एक मति, ये बिच के बारह बाट[८] ॥१९०॥

---

१ बिवेकी। २ दाधे रीगे = जले तपे जीव जंतु की नाईं रगते हैं अर्थात जीते जी मृतक तुल्य हैं। ३ हानि पहुँचावै या डालै। ४ बोलैं। ५ एक चित होके। ६ निबेड़ा करना, तै करना। ७ तिन से। ८ तित्तर बित्तर, बेठिकाने।

सबै सयाने कहि गये, पहुँचे का घर एक ।
दादू मारग माहिँ के, तिन की बात अनेक ।१९१॥
सूरज सन्मुख आरसी, पावक किया प्रकास ।(१-११८)
दादू साईं साध बिच, सहजैं निपजै दास ॥१९२॥
सूरज साखी भूत है, साच करै परकास ।
चोर डरै चोरी करे, रैनि तिमर का नास ॥१९३॥
चोर न भावै चाँदिणाँ, जिनि उजियारा होइ ।
सूते का सब धन हडौं[1], मुझै न देखै कोइ ॥१९४॥

॥ संसकार आगम ॥

घटि घटि दादू कहि समझावै, जैसा करै सो तैसा पावै ।
को काहू को सीरी नाहीँ, साहिब देखै सब घट माहीँ ।१९५

१४—भेष को अंग

[दादू] नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥

दादू बूड़ै ज्ञान सब, चतुराई जलि जाइ ।
अंजन मंजन फूँकि कै, रहौ राम ल्यौ लाइ ॥ २ ॥

राम बिना सब फीके लागैं, करनी कथा गियान ।
सकल अबिर्था[1] कोटि करि, दादू जोग धियान ॥ ३ ॥

ज्ञानी पंडित बहुत हैं, दाता सूर अनेक ।
दादू भेष अनंत हैं, लागि रह्या सो एक ॥ ४ ॥

कोरा कलस अवाह[2] का, ऊपरि चित्र अनेक ।
क्या कीजै दादू बस्त बिन, ऐसे नाना भेष ॥ ५ ॥

बाहरि दादू भेष बिन, भीतर बस्त अगाध ।
सो ले हिरदे राखिये, दादू सन्मुख साध ॥ ६ ॥

[दादू] भाँडा भरि धरि बस्त सूँ, ज्यौं महिंगे मोल बिकाइ ।
खाली भाँडा बस्त बिन, कौड़ी बदले जाइ ॥ ७ ॥

[दादू] कनक कलस बिष सूँ भर्‍या, सो किस आवै काम ।
सो धनि कूटा चाम का, जा मैं अमृत राम ॥ ८[3] ॥

दादू देखै बस्त कौं, बासन देखै नाहिँ ।
दादू भीतरि भरि धर्‍या, सो मेरे मन माहिँ ॥ ९ ॥

[दादू] जे तूँ समझै तो कहौं, साचा एक अलेष ।
डाल पान तजि मूल गहि, क्या दिखलावै भेष ॥ १० ॥

---

१ व्यर्थ । २ कुम्हार का आवा । ३ सोने का कलसा जिस मेँ विष भरा हो बेकाम है परंतु कूटे चमड़े का कुप्पा भी जिस मेँ नाम (राम) रूपी अमृत भरा हो वह धन्य (धनि) है ।

[दादू] सब दिखलावैं आप कूँ, नाना भेष बणाइ ।
जहँ आपा मेटन हरि भजन, तेहिं दिसि कोई न जाइ ॥११॥
सो दिसा कतहूँ रहीं, जेहिं दिसि पहुँचे साध ।
मैं तैं मूरिख गहि रहे, लोभ बड़ाई बाद ॥१२॥
[दादू] भेष बहुत संसार मैं, हरि जन बिरला कोइ ।
हरि जन राता राम सूँ, दादू ऐके सोइ ॥१३॥
हीरै रीझै जौहरी, खलि रीझै संसार ।
स्वाँग साध बहु अंतरा, दादू सत्ति बिचार ॥१४॥
स्वाँग साध बहु अंतरा, जेता धरनि अकास ।
साधू राता राम सूँ, स्वाँग जगत की आस ॥१५॥
[दादू] स्वाँगी सब संसार है, साधू बिरला कोइ ।
जैसैं चंदन बावना, बन बन कहीं न होइ[1] ॥१६॥
[दादू] स्वाँगी सब संसार है, साधू कोई एक ।
हीरा दूरि दिसंतरा, कंकर और अनेक ॥१७॥
[दादू] स्वाँगी सब संसार है, साधू सोधि सुजाण ।
पारस परदेसौं भया, दादू बहुत पषाण ॥१८॥
[दादू] स्वाँगी सब संसार है, साध समंदाँ पार ।
अनलपंखि कहँ पाइये, पंखी कोटि हजार ॥१९॥
दादू चंदन बन नहीं, सूरन के दल नाहिं ।
सकल समंद हीरा नहीं, त्यूँ साधू जग माहिं ॥२०॥
जे साईं का ह्वै रहै, साईं तिस का होइ ।
दादू दूजी बात सब, भेष न पावै कोइ ॥२१॥

---

१ बावना चंदन चंदनों में विशेष सुगंधित होता है सो वह हर एक जंगल में नहीं मिल सकता ।

[दादू] स्वाँग सगाई कुछ नहीं, राम सगाई साच ।
दादू नाता नाँव का, दूजै अंगि[1] न राच ॥२२॥
दादू एकै आतमा, साहिब है सब माहिँ ।
साहिब के नाते मिलै, भेष पंथ के नाहिँ ॥२३॥
[दादू] माला तिलक सूँ कुछ नहीं, काहू सेती काम ।
अंतरि मेरे एक है, अहि निसि उसका नाम ॥२४॥
[दादू] भगत भेष धरि मिथ्या बोलै, निंदा पर अपबाद ।
साचे कूँ झूठा कहै, लागै बहु अपराध ॥२५॥
[दादू] कब हूँ कोई जिनि मिलै, भगत भेष सूँ जाइ ।
जीव जन्म का नास है, कहै अमृत बिष खाइ ॥२६॥
[दादू] पहुँचे पूत बटाऊ ह्वै करि, नट ज्यूँ काछ्या भेष ।
खबरि न पाई खोज की, हम कूँ मिल्या अलेष ॥२७॥
[दादू] माया कारणि मूँड मुँडाया, यहु तौ जोग न होई ।
पारब्रह्म सूँ परचा नाहीं, कपट न सीझै कोई ॥२८॥
पीव न पावै बावरी, रचि रचि करै सिँगार ।
दादू फिरि फिरि जगत सूँ, करैगी बिभचार ॥२९॥
प्रेम प्रीत सनेह बिन, सब झूठे सिंगार ।
दादू आतम रस नहीं, क्यूँ मानै भरतार ॥३०॥
[दादू] जग दिखलावै बावरी, षोड़स करै सिँगार ।
तहँ न सँवारै आप कूँ, जहँ भीतर भरतार ॥३१॥
सुध बुध जीव धिजाइ करि, माला संकल बाहि ।
दादू माया ज्ञान सूँ, स्वामी बैठा खाइ ॥३२[2]॥

---

१ नोटः—एक लिपि मेँ "अंगि" के बदले "रंग" है। २ भेषधारी स्वामी बने हुए जीवोँ के गले मेँ कंठी की साँकर (संकल) डालकर और माया मंत्र दे कर उन की सुध बुध को दबा देते हैँ और आप बैठे माल चाभते हैँ।

जोगी जंगम सेवड़े, बौध सन्यासी सेख।
षटदर्सन दादू राम बिन, सबै कपट के भेख ॥३३॥

[दादू] सेख मसाइख औलिया, पैगम्बर सब पीर।
दरसन सूँ परसन नहीं, अज हूँ वेली तीर[१] ॥३४॥

[दादू] नाना भेष बनाइ करि, आपा देखि दिखाइ।
दादू दूजा दूरि करि, साहिब सूँ ल्यौ लाइ ॥३५॥

दादू देखा देखी लोक सब, केते आवैं जाहिं।
राम सनेही ना मिलै, जे निज देखै माहिं ॥३६॥

[दादू] सब देखैं अस्थूल कौं, यहु ऐसा आकार।
सूषिम सहज न सूझई, निराकार निरधार ॥३७॥

[दादू] बाहर का सब देखिये, भीतर लख्या न जाइ।
बाहरि दिखावा लोक का, भीतरि राम दिखाइ ॥३८॥

[दादू] यहु परख सराफी ऊपली[२], भीतरि की यहु नाहिं।
अंतरि की जानैं नहीं, तार्थैं खोटा[३] खाहिं ॥३९॥

[दादू] झूठा राता झूठ सूँ, साचा राता साच।
एता अंध न जानहीं, कहँ कंचन कहँ काच ॥४०॥

[दादू] सचु बिन साईं ना मिलै, भावै भेष बनाइ।
भावै करवत उरध-मुखि[४], भावै तीरथ जाइ ॥४१॥

[दादू] साचा हरि का नाँव है, सो ले हिरदै राखि।
पाखँड परपँच दूरि करि, सब साधौं की साखि ॥४२॥

हिरदै की हरि लेइगा, अंतरजामी राइ।
साच पियारा राम कूँ, कोटिक करि दिखलाइ ॥४३॥

१ इस तरफ़। २ ऊपरी। ३ धोखा। ४ काशी करवत अर्थात उलटे लटके हुए आरे से सिर कटा देना।

दादू मुख की ना गहै, हिरदे की हरि लेइ।
अंतरि सूधा एक सूँ; सो बोल्याँ दोस न देइ ॥४४॥
सब चतुराई देखिये, जे कुछ कीजे आन।
मन गहि राखै एक सूँ, दादू साध सुजान ॥४५॥
सबद सुई सूरति धागा, काया कंथा[1] लाइ।
दादू जोगी जुगि जुगि पहिरै, कबहूँ फाटि न जाइ ॥४६॥
ज्ञान गुरू की गूदड़ी, सबद गुरू का भेष।
अतीत हमारी आतमा, दादू पंथ अलेष ॥४७॥
इसक अजब अबदाल[2] है, दरदवंद दरवेस।
दादू सिक्का सबर है, अकलि पीर उपदेस ॥४८॥
[दादू] सतगुर माला तन दिया, पवन सुरति सूँ पोइ।
बिन हाथौं निस दिन जपै, परम जाप यूँ होइ ॥४९॥

---

१ गुदड़ी। २ "अबदाल" शब्द के मानी फ़ारसी मैं फ़क़ीर या साधू के हैं और यहाँ खपते भी हैं परंतु पं० चंद्रिका प्रसाद ने इसका अर्थ सिद्धि शक्ति और करामात लिखा है।

॥ इति भेष को अंग समाप्त १२ ॥

जे जन राते राम सूँ, तिन की मैं बलि जाँउ।
दादू उन पर वारणे, जे लागि रहे हरि नाँउ ॥४६॥
जे जन हरि के रँग रँगे, सो रँग कदे न जाइ।
सदा सुरंगे संत जन, रँग मैं रहे समाइ ॥४७॥
दादू राता राम का, अबिनासी रँग माहिँ।
सब जग धोबी धोइ मरै, तो भी छूटै[१] नाहिँ ॥४८॥
साहिब किया सो क्यौं मिटै, सुंदर सोभा रंग।
दादू धोवैं बावरे, दिन दिन होइ सुरंग ॥४९॥
परमारथ कूँ सब किया, आप सवारथ नाहिँ।
परमेसुर परमारथी, कै साधू कलि माहिँ ॥५०॥
पर उपगारी संत सब, आये यहि कलि माहिँ।
पिवैं पिलावैं राम रस, आप सवारथ नाहिँ ॥५१॥
पर उपगारी संत जन, साहिब जी तेरे।
जाती देखी आतमा, राम कहि टेरे ॥५२॥
चंद सूर पावक पवन, पाणी का मत सार।
धरती अम्बर राति दिन, तरवर फलैँ अपार ॥५३॥
छाजन भोजन परमारथी, आतम देव अधार।
साधू सेवग राम के, दादू पर उपगार ॥५४॥
जिस का तिस कूँ दीजिये, सुकिरति पर उपगार।
साधू सेवग सो भला, सिर नहिँ लेवै भार ॥५५॥
परमारथ कूँ राखिये, कीजे पर उपगार।
दादू सेवग सो भला, निरअंजन[२] निरकार[३] ॥५६॥
सेवा सुकिरति सब गया, मैं मेरा मन माहिँ।
दादू आपा जब लगैं, साहिब मानै नाहिँ ॥५७॥

---

१ छूटै। २ निर्माया। ३ निराकार, अरूप।

साध सिरोमणि सोधि ले, नदी पूरि परि आइ ।
सजीवनि साम्हाँ चढ़ै, दूजा बहिया जाइ ॥५८[1]॥

जिन के मस्तक मणि[2] बसै, सो सकल सिरोमणि अंग ।
जिन के मस्तक मणि नहीं, ते बिष भरे भवंग ॥५९॥

दादू इस संसार मैं, ये द्वै रतन अमोल ।
इक साईं अरु संत जन, इन का मोल न तोल ॥६०॥

दादू इस संसार मैं, ये द्वै रहे लुकाइ ।
राम सनेही संत जन, औ बहुतेरा आइ ॥६१॥

सगे हमारे साध हैं, सिर पर सिरजनहार ।
दादू सतगुर सो सगा, दूजा धंध बिकार ॥६२॥ (१-१४०)

जिन के हिरदै हरि बसै, सदा निरंतर नाँउँ ।
दादू साचे साध की, मैं बलिहार जाउँ ॥६३॥

साचा साध दयाल घट, साहिब का प्यारा ।
राता माता राम रस, सो प्राण हमारा ॥६४॥

[दादू] फिरता चाक कुम्हार का, यूँ दीसै संसार ।
साधू जन निहचल भये, जिन के राम अधार ॥६५॥

जलती बलती आतमा, साध सरोवर जाइ ।
दादू पीवै राम रस, सुख मैं रहै समाइ ॥६६॥

ाँजी[3] माहैं मेलि[4] करि, पावै सब संसार ।
करता केवल निर्मला, को साधू पीवणहार ॥६७॥

---

१ जैसे जीती मछली नदी मैं उलटी धारा पर चढ़ती चली जाती है पर मरी मछली धारा के साथ वह जाती है ऐसे ही जीते जागते पुरुष अर्थात साधजन भवसागर के प्रवाह के विरुद्ध चलते हैं और मुर्दा-दिल संसारी उस मैं वह जाते हैं। २ भक्ति रूपी रत्न। ३ रस या मट्ठे मैं राई आदि मसाला डाल कर एक तरह की पतली खटाई बनाते हैं। ४ मिलाना।

[दादू] असाध मिलै अंतर पड़ै, भाव भगति रस जाइ।
साध मिलै सुख ऊपजै, आनँद अंगि न माइ[1] ॥६८॥
[दादू] साधू संगति पाइये, राम अमी फल होइ।
संसारी संगति पाइये, बिष फल देवै सोइ ॥६९॥
दादू सभा संत की, सुमती उपजै आइ।
साकत की सभा बैसताँ, ज्ञान काया थैं जाइ ॥७०॥
[दादू] सब जग दीसै एकला, सेवग स्वामी दोइ।
जगत दुहागी राम बिन, साध सुहागी सोइ ॥७१॥
[दादू] साधू जन सुखिया भये, दुनियाँ कूँ बहु दंद[2]।
दुनी दुखी हम देखताँ, साधन सदा अनंद ॥७२॥
दादू देखत हम सुखी, साईं के सँगि लागि।
यौं सो सुखिया होइगा, जा के पूरे भाग ॥७३॥
[दादू] मीठा पीवै राम रस, सो भी मीठा होइ।
सहजैं कड़वा मिटि गया, दादू निर्बिष सोइ ॥७४॥
[दादू] अंतरि एक अनंत सूँ, सदा निरंतर प्रीति।
जिहिं प्राणी प्रीतम बसै, सो बैठा त्रिभुवन जीति ॥७५॥
[दादू] मैं दासी तिहँ दासकी, जिहँ सँग खेलै पीव।
बहुत भाँति करि वारणै, ता परि दीजै जीव ॥७६॥
[दादू] लीला राजा राम की, खेलैं सब ही संत।
आपा पर एकै भया, छूटी सबै भरंत ॥७७॥ (१३-१३१)
[दादू] आनँद सदा अडोल सूँ, राम सनेही साध।
प्रेमी प्रीतम कूँ मिलै, यह सुख अगम अगाध ॥७८॥

यहु घट दीपक साध का, ब्रह्म जोति परकास ।
दादू पंखी संत जन, तहाँ परै निज दास ॥७९॥ (१२-११६)

घर बन माहैं राखिये, दीपक जोति जगाइ ।
दादू प्राण पतंग सब, जहँ दीपक तहँ जाइ ॥८०॥

घर बन माहैं राखिये, दीपक जलता होइ ।
दादू प्राण पतंग सब, जाइ मिलैं सब कोइ ॥८१॥

घर बन माहैं राखिये, दीपक प्रगट प्रकास ।
दादू प्राण पतंग सब, आइ मिलैं उस पास ॥८२॥

घर बन माहैं राखिये, दीपक जोति सहेत ।
दादू प्राण पतंग सब, आइ मिलैं उस हेत ॥८३॥

जिहिं घट परगट राम है, सो घट तज्या न जाय ।
नैनौं माहैं राखिये, दादू आप नसाइ[१] ॥८४॥

जिहिं घटि दीपक राम का, तिहिं घट तिमर न होइ ।
उस उजियारे जोति के, सब जग देखै सोइ ॥८५॥
(४-१९६,१२-११२)

कबहुँ न बिहड़ै[२] सो भला, साधू दिढ़-मति होइ ।
दादू हीरा एक रस, बाँधि गाँठड़ी सोइ ॥८६॥

ग्रंथ[३] न बाँधै गाँठड़ी, नहिं नारी सूँ नेह ।
मन इंद्री इस्थिर करै, छाँडि सकल गुण देह ॥८७॥

निराकार सूँ मिलि रहै, अखंड भगति करि लेह ।
दादू क्यूँ कर पाइये, उन चरणौं की खेह ॥८८॥

---

१ आपा को मेट कर। २ बिछुड़ै, बदलै। ३ ग्रंथ के अर्थ गाँठ और धन माल के भी हैं।

प्रश्न–[दादू] षुध्या त्रिषा क्यूँ भूलिये, सीत तपति क्यूँ जाइ।
क्यूँ सब छूटै देह गुण, सतगुरु कहि समझाइ ॥२२॥

उत्तर–माहीं थैं मन काढ़ि करि, ले राखै निज ठौर।
दादू भूलै देह गुण, बिसरि जाइ सब और ॥२३॥

नाँव भुलावे देह गुण, जीव दसा सब जाइ।
दादू छाड़ै नाँव कूँ, तौ फिरि लागै आइ ॥२४॥

[दादू] दिन दिन राता राम सूँ, दिन दिन अधिक सनेह।
दिन दिन पीवै राम रस, दिन दिन दर्पण देह ॥२५॥

[दादू] दिन दिन भूलै देह गुण, दिन दिन इंद्रो नास।
दिन दिन मन मनसा मरै, दिन दिन होइ प्रकास ॥२६॥

देह रहै संसार मैं, जीव राम के पास।
दादू कुछ ब्यापै नहीं, काल झाल दुख त्रास ॥२७॥

काया की संगति तजै, बैठा हरि पद माहिं।
दादू निर्भय ह्वै रहै, कोइ गुण ब्यापै नाहिँ ॥२८॥

काया माहैं भय घणा, सब गुण ब्यापैं आइ।
दादू निर्भय घर किया, रहे नूर मैं जाइ ॥२९॥

खड़ग धार बिष ना मरै, कोइ गुण ब्यापै नाहिँ।
राम रहै त्यूँ जन रहै, काल झाल जल माहिँ ॥३०॥

सहज बिचार सुख मैं रहै, दादू बड़ा बमेक[1]।
मन इंद्री पसरैं नहीं, अंतरि राखै एक ॥३१॥

। इंद्री पसरैं नहीं, अहि निसि एकै ध्यान।
उपगारो प्राणिया, दादू उत्तिम ज्ञान ॥३२॥

---

१ विवेक।

[दादू] आपा उरझैं उरझिया, दीसै सब संसार । (१-१३२)
आपा सुरझैं सुरझिया, यहु गुर ज्ञान बिचार ॥३३॥
[दादू] मैं नाहीं तब नाँव क्या, कहा कहावै आप ।
साधौ कहौ बिचारि करि, मेटहु तन को ताप ॥३४॥
जब समझ्या तब सुरझिया, उलटि समाना सोइ ।
कछू कहावै जब लगैं, तब लगि समझ न होइ ॥३५॥
जब समझ्या तब सुरझिया, गुरमुखि ज्ञान अलेख ।
उर्ध कँवल मैं आरसो, फिरि करि आपा देख ॥३६॥
प्रेम भगति दिन दिन बधै[1], सोई ज्ञान बिचार ।
दादू आतम सोधि करि, मथि करि काढ़्या सार ॥३७॥
[दादू] जिहि बिरियाँ यहु सब कुछ भया, सो कुछ करो बिचार ।
काजी पंडित बावरे, क्या लिखि बंधे भार ॥३८॥
[दादू] जब यहु मन हीं मन मिल्या, तब कुछ पाया भेद ।
दादू ले करि लाइये, क्या पढ़ि मरिये बेद ॥३९॥
पाणी पावक पावक पाणी, जाणै नहीं अजाण ।
आदि अंत बिचारि करि, दादू जाण सुजाण ॥४०॥
सुख माहैं दुख बहुत है, दुख माहैं सुख होइ ।
दादू देखि बिचारि करि, आदि अंत फल दोइ ॥४१॥
मीठा खारा खारा मीठा, जाणै नहीं गँवार ।
आदि अंत गुण देखि करि, दादू किया बिचार ॥४२॥
कोमल कठिन कठिन है कोमल, मूरिख मर्म न बूझै ।
आदि अंत बिचारि करि, दादू सब कुछ सूझै ॥४३॥

---

१ बढ़ै ।

बहुत गया थोड़ा रह्या, अब जिव सोच निवार।
दादू मरणा माँडि[1] रहु, साहिब के दरबार ॥२४॥
जीवूँ का संसा पड़्या, को का कूँ तारै।
दादू सोई सूरिवाँ[2], जे आप उबारै ॥२५॥
जे निकसै संसार थैं, साईं की दिसि धाइ।
जे कबहूँ दादू बाहुड़ै, तौ पीछैं मार्‍या जाइ ॥२६॥
[दादू] कोइ पीछैं हेला जिनि करै, आगैं हेला आव।
आगैं एक अनूप है, नहिं पीछैं का भाव ॥२७॥
पीछैं कौं पग ना भरै, आगैं कौं पग देइ।
दादू यहु मत सूर का, अगम ठौर कौं लेइ ॥२८॥
आगा चलि पीछा फिरै, ता का मूँह मदीठ[3]।
दादू देखै दोइ दल, भागै देकर पीठ ॥२९॥
दादू मरणा माँडि करि, रहै नहीं ल्यौ लाइ।
काइर भाजै जीव ले, आरणि[4] छाडे जाइ ॥३०॥
सूरा होइ सुमेर उलंघै, सब गुण बंध्या छूटै।
दादू निर्भय ह्वै रहै, काइर तिणा न टूटै ॥३१॥
सर्प केसरि काल कुंजर, बहु जोध मारग माहिं[5]।
कोटि मैं कोइ एक ऐसा, मरण आसँघि[6] जाहिं ॥३२॥
[दादू] जब जागै तब मारिये, बैरी जिय के साल।
मनसा डायनि काम रिपु, क्रोध महाबलि काल ॥३३॥
पंच चोर चितवत रहैं, माया मोह बिष झाल।
चेतन पहरै आपणै, कर गहि खड़ग सँभाल ॥३४॥

१ मँड रह, मुस्तैद रह। २ सूरमा। ३ देखने योग्य नहीं। ४ रण, लड़ाई।
५ संत पंथ में साँप, सिंह, काल, हाथी, आदि दूत बिघ्नकारक हैं। ६ हिम्मत से।

काया कबज कमान करि, सार सबद करि तीर।
दादू यहु सर साँधि करि, मारै मोटे मीर ॥३५॥
काया कठिन कमान है, खाँचै बिरला कोय।
मारै पंचौं मिरगला, दादू सूरा सोइ ॥३६॥
जे हरि कोप करै इन ऊपरि, तौ काम कटक दल जाहिँ कहाँ।
लालच लोभ क्रोध कत भाजै, प्रगट रहे हरि जहाँ तहाँ ॥३७॥
तब साहिब कौँ सिजदा किया, जब सिर धरया उतारि।
यौँ दादू जीवन मरै, हिर्स हवा कौँ मारि ॥३८॥ (२३-१०)
[दादू] तन मन काम करीम के, आवै तौ नीका।
जिस का तिस कौँ सौँपिये, सोच क्या जी का ॥३९॥
जे सिर सौँप्या राम कौँ, सो सिर भया सनाथ।
दादू दे ऊरण[1] भया, जिस का तिस के हाथ ॥४०॥
जिस का है तिस कौँ चढ़ै, दादू ऊरण होइ।
पहिली देवै सो भला, पीछै तौ सब कोइ ॥४१॥
साइँ तेरे नाँव परि, सिर जीव करूँ कुरबान।
तन मन तुम परि वारणे, दादू प्यंड पराण ॥४२॥
अपणे साइँ कारणे, क्या क्या नहिँ कीजै।
दादू सब आरंभ तजि, अपणा सिर दीजै ॥४३॥
सिर के साटै लीजिये, साहिब जी का नाँव।
खेलै सीस उतारि करि, दादू मैं बलि जाँव ॥४४॥
खेलै सीस उतारि करि, अधर एक सौँ आइ।
दादू पावै प्रेम रस, सुख मैं रहै समाइ ॥४५॥
[दादू] मरणे थौं तूँ मति डरै, सब जग मरता जोइ।
मिलि करि मरणा राम सौँ, तौ काल अजरावर[2] होइ ॥४६॥

---

१ उरिन, बेबाक़। २ अमर।

[दादू]जग ज्वाला जम रूप है, साहिब राखणहार ।
तुम बिच अंतर जिनि पड़ै, ता थैं करूं पुकार ॥५६॥
जहँ तहँ बिषै बिकार थैं, तुम ही राखणहार ।
तन मन तुम कौं सौंपिया, साचा सिरजनहार ॥५७॥
[दादू कहै]गरक रसातल जात है, तुम बिन सब संसार ।
कर गहि करता काढ़ि ले, दे अवलंब अधार ॥५८॥
[दादू] दौं लागी जग परजलै, घटि घटि सब संसार ।
हम थैं कछू न होत है, तुम बरसि बुझावणहार ॥५९॥
[दादू] आतम जीव अनाथ सब, करतार उबारै ।
राम निहोरा कीजिये, जिनि काहू मारै ॥६०॥
अरस जिमीं औजूद मैं, तहाँ तपै अफताब ।
सब जग जलता देखि करि, दादु पुकारै साध ॥६१॥
सकल भुवन सब आतमा, निरबिष करि हरि लेइ ।
पड़दा है सो दूरि करि, कुसमल रहणि न देइ ॥६२॥
तन मन निर्मल आतमा, सब काहू की होइ ।
दादू बिषै बिकार की, बात न बूझै कोइ ॥६३॥
समरथ धोरी[2] कंध धरि, रथ ले ओर निबाहि ।
मारग माहिं न मेलिये, पीछैं बिड़द[3] लजाहि ॥६४॥
[दादू] गगन गिरै तब को धरै, धरती धर छंडै ।
जे तुम छाड़हु राम रथ, कंधा को मंडै ॥६५॥
[दादू]ज्यौं वै बरत गगन थैं टूटै,कहाँ धरणि कहँ ठाम।(७-३१)
लागी सुरत अंग थैं छूटै, सो कत जीवै राम ॥६६॥

---

१ डूबा । २ रक्षक । ३ प्रतिज्ञा ।

अंतरजामी एक तूँ, आतम के आधार।
जे तुम छाडहु हाथ थैं, तौ कैाण सँबाहणहार ॥६७॥
तेरा सेवग तुम लगैं, तुम्ह हीं माथैं भार।
दादू डूबत रामजी, बेगि उतारौ पार ॥६८॥
सत छूटा सूरातन गया, बल पौरिष भागा जाइ।
कोई धीरज ना धरै, काल पहूँता आइ ॥६९॥
संगी थाके संग के, मेरा कुछ न बसाइ।
भाव भगति धर्न लूटिये, दादू दुखी खुदाइ ॥७०॥
दादू जियरे जक[1] नहीं, बिसराम न पावै।
आतम पाणो लूण ज्यौं, ऐसैं होइ न आवै ॥७१॥
[दादू] तेरो खूबी खूब है, सब नीका लागै।
सुंदर सोभा काढ़ि ले, सब कोई भागै ॥७२॥
तुम्ह हौ तैसी कीजिये, तौ छूटैंगे जीव।
हम हैं ऐसी जिनि करौ, मैं सदिकै जाऊँ पीव ॥७३॥
अनाथौँ का आसिरा, निरधाराँ आधार।
निर्धन का धन राम है, दादू सिरजनहार ॥७४॥
साहिब दर दादू खड़ा, निसि दिन करै पुकार।
मीराँ मेरा मिहर करि, साहिब दे दीदार ॥७५॥
दादू प्यासा प्रेम का, साहिब राम पिलाइ।
परगट प्याला देहु भरि, मिरतक लेहु जिवाइ ॥७६॥
अल्ला आली नूर का, भरि भरि प्याला देहु।
हम कूँ प्रेम पिलाइ करि, मतवाला करि लेहु ॥७७॥

---

1 सुख, शांति।

तुम कूँ हम से बहुत हैं , हम कूँ तुम से नाहिं ।
दादू कूँ जिनि परिहरौ , तूँ रहु नैनहुं माहिं ॥७८॥
तुम थैं तब हीं होइ सब , दरस परस दरहाल ।
हम थैं कबहुं न होइगा , जे बीतहिं जुग काल ॥७९॥
तुम हीं थैं तुम्ह कूँ मिलै , एक पलक मैं आइ ।
हम थैं कबहुं न होइगा , कोटि कलप जे जाहिं ॥८०॥
साहिब सूँ मिलि खेलते , होता प्रेम सनेह ।
दादू प्रेम सनेह बिन , खरी दुहेली[1] देह ॥८१॥
साहिब सूँ मिलि खेलते , होता प्रेम सनेह ।
परगट दरसन देखते , दादू सुखिया देह ॥८२॥
तुम कूँ भावै और कुछ , हम कुछ कीया और ।
मिहर करौ तौ छूटिये , नहीं त नाहीं ठौर ॥८३॥
मुझ भावै सो मैं किया , तुझ भावै सो नाहिं ।
दादू गुनहगार है , मैं देख्या मन माहिं ॥८४॥
खुसी तुम्हारी त्यूँ करौ , हम तौ मानी हारि ।
भावै बंदा बकसिये , भावै गहि करि मारि ॥८५॥
[दादू] जे साहिब लेखा लिया , तौ सीस काटि सूली दिया ।
मिहरि मया करि फिलि[2] किया , तौ जीये जीये करि जिया ८६

इति विनती को अंग समाप्त ॥ ३४ ॥